है। पशुओंमें ज्ञान होता है, पर वह हमारे ज्ञानकी सीमातक कभी नहीं पहुँच सकता। इसलिए पशुओंसे मनुष्योंको शास्त्रकारोंने अच्छा बतलाया है । अन्यथा जैसा जीवन उनका है वैसा ही हमारा भी। जब हम मनुष्य हैं, पशुओंसे अच्छे हैं तब उसके साथ यह भी होना आवश्यक है कि हमारा कर्तव्य भी मनुष्यत्वको लिए हुए हो। केवल मनुष्य जन्मसे कुछ लाभ नहीं। संसारमें मनुष्य तो बहुत होगये, होंगे और हैं, पर सबसे वे अधिक उल्लेख करनेके योग्य समझे जाते हैं जिन्होंने अपने जीवनमें दूसरोंके भलाईकी चिन्ता की है । ऋषियों और महात्माओंके जीवन वृतान्त इसीलिए बड़े आदरसे पढ़े जाते हैं कि उन्होंने संसारकी शुभकामनासे अपने जीवनको उदार बनाकर उसे समर्पित कर दिया था। वे अपने आदर्श जीवनसे हमें भी यह शिक्षा दे गये हैं कि यदि तुम अपनेको मनुष्य समझते हो तो कभी दूसरोंकी भलाईसे मुख न फेरना। जीवनसे, धनसे, बलसे वा मनसे जिस तरह तुमसे बन सके अपने देश और जातिबन्धुओंकी सेवा करना। तब हमारा कर्तव्य कैसा होना चाहिए यह बात सहज ही ध्यानमें आ सकती है।

आज हम भी अपने पाठकोंको एक ऐसे ही उदारधी पुरुषका संक्षिप्त हाल सुनाते हैं, जिसने सार्वजनिक कामोंसे जैन समाजका गौरव उन्नत किया है।

सेठ गुलाबचन्दजीका नाम खानदेश प्रान्तमें अच्छा प्रसिद्ध है। आप इस समय धूलियामें रहते हैं । आपका जन्म मारवाड़ प्रान्तके मींड गांवमें तारीख ९ मई सन् १२७८ को हुआ था । आपके माता पिताकी स्थिति बिलकुल साधारण थी। पर भाग्यं फ-

लति सर्वत्र इस नीतिके अनुसार किसीका जन्म कहीं भी क्यों न हुआ हो, वह अपने भाग्यसे अच्छी जगह पहुंच ही जाता है। आप जगमगाते रत्नको कहीं भी डाल दीजिए वह अपना गुण स्वयं प्रगट कर देगा। सेठ गुलाबचन्दजीका जन्म एक साधारण पुरुषके यहां होनेपर भी आपका भाग्य साधारण नहीं था। यही कारण था कि धूलिया निवासी श्रीयुत सेठ हीरालालजी रामलालजी आपको दत्तक लेकर धूलिया लिवा लाये। उस समय आपकी अवस्था सात वर्षकी थी। अर्थात्—१८८९ में आप धूलिया आये और तभीसे वहीं रहते हैं।

शिक्षण.

आपका शिक्षण प्रायः धूलियाके गवर्नमेंट हाईस्कूलमें हुआ। विद्याभिरुचि अधिक रहनेपर भी आपको शिक्षण बहुत थोड़ा मिला। इसका कारण है—जबतक मनुष्यके ऊपर किसी तरहकी विपत्ति नहीं आती, गृहस्थ धर्मका भार जबतक उसे नहीं दबाता तबतक उसका शिक्षण कार्य निर्विघ्न और अनाकुलतासे चलता है। पर जहां कुछ संसार-सम्बन्धी कार्य ऊपर आकर गिरा कि फिर शिक्षा वगैरह सब एक ओर रक्खी रह जाती है। जबतक आपके पिताजी जीते रहे तबतक आपका विद्याभ्यास अच्छी तरह चलता रहा। सन् १८९४ जूनमें आपके पिताका स्वर्गवास होगया। एका एक छोटी अवस्थामें आपको इस विपत्तिका सामना करना पड़ा। अगत्या आपको पढ़ना छोड़ देना पड़ा। उस समय दूकानका जितना कारोबार था उसका भार आपहीके ऊपर आ पड़ा। जरूरी था कि आप

उसकी सम्हाल करते। आपके सिवा और कोई नहीं था जिसपर यह भार छोड़कर आप अपना शिक्षण समाप्त करते।

यद्यपि उस समय आपकी शिक्षा अधूरी रह गई, पर आपकी उसकी ओर अभिरुचि न घटकर दिनोंदिन बढ़ती ही गई। उसीका यह फल है, जो अब भी आपने अपने यहां एक इंग्लिश टीचर रख छोडा है और उससे स्वयं पढ़ा करते हैं। हमारी जातिके धनवानोंसे आपमें यह बात बड़ी उत्तम है।

सार्वजनिक कामोंमें सहायता.

धन होनेपर भी उसका सदुपयोग करनेवाले बहुत थोड़े होते हैं। कोई विवाहशादीमें, कोई रंडियोंके नाचमें और कोई फिजूल कामोंमें अपना धन खर्च करते हैं। उससे किसीको लाभ पहुंचे या न पहुँचे, इसका कुछ विचार नहीं। सेठ गुलाबचंदजीमें यह बात नहीं है। विद्याभिरुचिने ऐसे बुरे खयालोंको आपमेंसे दूर निकाल डाले हैं। आप जहांतक होता है अपना धन ऐसे कामोंमें लगाते हैं जिससे देश या जातिको लाभ पहुँचता हो। आपने चार हजार रुपया सरकारको इसलिए दिया है कि उससे जातीय व विजातीय विद्यार्थियोंको स्कालर्शिप दी जाया करे।

आप धूलियाकी पांजरापोल तथा प्राणिरक्षक संस्थाके प्रेसिडेण्ट हैं। उन्हें सदा उचित सहायता पहुँचाते रहते हैं। ये दोनों संस्थाएं बहुत अच्छाकार्य कर रही हैं। व्हिक्टोरियाऑर्फनेज (अनाथालय) के आप लाईफ मेम्बर हैं। जहांतक होता है उसे और सहायता भी देते रहते हैं।

इसके अतिरिक्त आप दीन दुखियों और अनाथोंके एक उदार रक्षक हैं। जब देशमें छप्पनका भीषण दुष्काल पड़ा था, बेचारे गरीब लोगोंकी मिट्टी पलीत हो रही थी, गलियों गलियोंमें बेचारे ठोकरें खाते फिरते थे, अन्नके दाने दानेके लिए तरसते फिरते थे और चारों ओर अस्थिशेष देह पिंजर सिसकते हुए—कराहते हुए—दीख पड़ते थे, उस समय आपने दयासे द्रवीभूत होकर बहुत कुछ दान दिया था। अनाथोंकी रक्षा की थी। आपकी इस उदारतापर मुग्ध होकर सरकारने यह कह कर कि "आप दुःखितोंकी अच्छी सहायता करते हैं" एक मेडल प्रदान किया है। सरकारके द्वारा आपके ऐसे सम्मानसे जैन जातिका गौरव बढ़ा है। आप धूलियाकी कोआपरेटिवसोसाइटीबैंकके भी सभापति हैं।

राज्य सम्मान. सर्व साधारणमें तो आपका आदर है ही। इसके अतिरिक्त राज्य सम्मान भी आपका अच्छा है। अभी खबर मिली है कि आप डिस्ट्रिक्ट—लोकल-बोर्डके मेम्बर चुने गये हैं और म्युनिसिपिल्कमेटीके भी आप पहलेसे मेम्बर हैं। आपके इस सम्मानसे किस जातिबन्धुको प्रसन्नता न होगी।

धार्मिक दान. सेठ गुलाबचन्दजीका लक्ष्य जैसा सार्वजनिक कामोंकी ओर है वैसा ही धार्मिक कार्योंकी ओर भी है। इस समय जैसा हमारे बहुतसे सज्जन धर्मको एक कण्टक समझकर उसपरसे अपना दिल फिरा लेते हैं और फिर उसके लिए खर्च करना जरूरी नहीं समझते, यह बात आपमें नहीं है। आपको धार्मिक

कार्योंसे भी बड़ी रुचि है। सम्वत् १९६९ में धूलियामें आपने एक उद्यापन किया था। उसमें लगभग छह हजार रुपया खर्च किया था। सम्वत् १९६२ में आप बड़वानीकी यात्रा करनेके लिए गये थे। वहांके मन्दिरोंकी जीर्णदशा देखकर उनके पुनरुद्धार करनेके लिए आपने लगभग दो हजार रुपया व्यय किया था। आपकी सब कामोंमें ऐसी ही उदार बुद्धि है। हमारी जातिमें रुपया खर्च करनेवालोंकी तो अब भी कमी नहीं है, पर कमी है केवल विवेचना बुद्धिकी। हम सेठ गुलाबचन्दजीकी इस विषयमें तारीफ करेंगे कि आप धार्मिक अथवा सार्वजानिक जो जो काम करते हैं, वह आवश्यक्ताके अनुसार और विचार बुद्धिसे। और इसीलिए अपनी जातिके धनिकोंमें आपको एक आदर्श धनिक कहें तो कुछ अनुचित नहीं जान पड़ेगा।

स्वभाव

सेठ गुलाबचन्दजीका स्वभाव सरल और बड़ा मिलन सार है। आपके पास द्रव्य है तब भी आपको अपने सेठपनेका अभिमान नहीं है। आपमें यह बहुत अच्छा गुण है कि गरीबसे गरीब भी यदि कोई हो तब भी उसके साथ बोलनेमें, उसकी बातें सुननेमें आप कभी नाक भौंए न सिकोडेंगे। सबसे मिलेंगे, सबसे बातें करेंगे। जातिमें बड़े बड़े धनवान्, श्रीमान् और खूब खर्च करनेवाले बहुत हैं, पर आप सरीखे उदार हृदय, सरल स्वभावी और विनीत बहुत कम मिलेंगे। आपसे हमारी जातिका बड़ा गौरव है। आप सरीखे उदार पुरुष हमारी जातिमें सदा होते रहें यह हमारी पवित्र कामना है। मंगलमय परमात्मा हमारी इस कामनाको पूर्ण करे।

सेठ साहबसे हमें और भी बहुत आशा है। हम आपसे आग्रह पूर्वक निवेदन करते हैं कि आप अपने चित्तको खण्डेलवालजातिके सुधारकी ओर विशेष रूपसे लगावें। वह अज्ञानके अपार समुद्रमें बही जा रही है, उसपर दया करना—उसका उद्धार करना—उसे बचाना—बहुत आवश्यक है। आशा है कि श्रीमान् जातिके प्रति जो अपना कर्तव्य है उसे पूर्ण करके जातिमात्रका शुभाशीर्वाद ग्रहण करेंगे।

श्रीसीमन्धरस्वामीके नाम खुलीचिट्ठी।

(३)

(लेखक, श्रीयुत वाड़ीलाल मोतीलाल शाह)

हे संसारके अकारण बन्धो! हमने आपके सच्चे मार्गको समझा नहीं। हमें अब कुछ कुछ यह ज्ञान होने लगा है कि अभीतक हममें खोटा अभिमान है। यदि हमें आपका सत्यार्थ मार्ग प्राप्त होगया होता तो अभीतक हम संसारमें भ्रमण नहीं करते, हम दूसरोंकी निन्दा करनेमें अपने पुरुषार्थका दुरूपयोग नहीं करते, अन्धकारको लोहेके घनसे भेदनेके लिए अपने बलको नहीं आजमाते, बेचारे पापी लोगोंके पापाचरण सबके सामने प्रकाशित करनेमें हमारी शक्तिका अन्त न होता। हे प्रभो! यदि हमने आपका पवित्र धर्म समझा होता तो अज्ञानको नष्ट करनेके लिए बेचारे अज्ञानियोंका तिरस्कार नहीं करते, किन्तु उन्हें ज्ञानकी प्राप्ति कराकर उनका अज्ञान दूर करते। प्रकाश अंधकारको

नष्ट करता है। इसलिए उनके हृदयपर ज्ञानका प्रकाश डालते। और जो बेचारे सत्यमार्गको न जाननेके कारण पापकर्ममें प्रवृत्त होते हैं उनपर दया, सहानुभूति और अनुकम्पा बतलाते। हमारे हृदयमें धिक्कारके लिए जरा भी स्थानके न होनेकी जरूरत है। जहां द्वेष है वहां दया नहीं और जहां दया नहीं वहां आपका निवास नहीं। आपने हमें चार भावनाओंका उपदेश दिया था और कहा था कि जिसमें ये भावनायें नहीं वह जैनी कहलानेका पात्र नहीं। प्रभो! वे चारों भावनायें हममें नाममात्रको भी नहीं रहीं और फिर आश्चर्य यह कि तब भी हम अपनेको जैनी कहते हैं। यह केवल हमारी धृष्टता--निर्लज्जता--है। हे नाथ! अब कुछ कुछ हमारी आंखें खुलने लगी हैं। यद्यपि हमारी आंखोंमें अभी उतना बल नहीं है जो आपके पूर्ण प्रकाशको सह सके, पर अब धीरे धीरे उस प्रकाशकी झांई हम ग्रहण करने लगे हैं। इसके लिए हम अपनी जातिको भाग्यवती समझते हैं।

हे भगवन्! आपने जिन चार भावनाओंका उपदेश दिया है वे न केवल जैनियोंके लिए हैं किन्तु सारे संसारके लिए हैं--जो आपके पवित्र धर्मको स्वीकार कर उसके अनुसार चलना चाहते हैं उन सबके लिए इन भावनाओंकी आवश्यक्ता--है। ये भावनायें अमुकके लिए हैं इसकी अत्र जरूरत नहीं। ये भावनायें जैसे हमारे जैन बन्धुओंके लिए हैं उसी तरह सारे संसारके जीवोंके लिए भी हैं। इस विषयमें कुछ आपके सामने निवेदन करता हूं। मैं आशा करता हूं कि आप मेरे दोषोंकी ओर दृष्टि न करेंगे। बालकमें विशेष ज्ञानकी आशा नहीं की जा सकती है। जो कुछ न्यूनता रहेगी

उसे आप पूर्ण करेंगे ही। इसी आशासे अब चारों भावनाओंका विचार करता हूं।

मैत्री भावनाकी हममें बड़ी भारी त्रुटि दिखाई पड़ती है। प्रातःकाल होता है और रात्रि जाती है। दिनपर दिन बीतते जाते हैं, पर उसके साथ हमारी स्वार्थवृत्ति तो बढ़ती ही जाती है। हे स्वामी! हम अपनी बुद्धिका, दूसरोंको—हमपर विश्वास करनेवालोंको—स्वार्थके प्रपञ्चजालमें फँसानेके लिए उपयोग करते हैं। हमें जहां तहां स्वार्थ ही स्वार्थ दृष्टि पड़ता है। हम इसी स्वार्थके वातावरणमें पलते हैं और इसीमें मर मिटते हैं। मैत्री किसे कहते हैं? कैसे दूसरोंके दुःखमें दुखी होना चाहिए? स्वार्थका त्याग—इसका मतलब क्या? ऐसी बहुत सी बातोंके सम्बन्धमें समझनेकी हम अपने ज्ञानकी क्या तारीफ करें? हम वाग्जाल फैलाना बहुत अच्छी तरह जानते हैं, वह हमें बहुत अच्छा जान पड़ता है। लोगोंको यह दिखलानेके लिए कि हम परमार्थके पुतले हैं, कभी पीछे पाँव नहीं धरते।

गुलाबके फूल नीचे जैसे कांटा होता है उसी तरह हमारी परमार्थकी बातोंमें भी हमारे स्वार्थका भाग बहुत ही भरा रहता है। हे नाथ! यह हमारी सच्ची स्थिति है। इसे आप अच्छी तरह जानते हो, आपसे कुछ भी अजाना नहीं है। पर अब हमारी इन बीती हुई बातोंपर पड़दा डाल दीजिए और हम अपनी इन बातोंको भूल जायँ वैसा प्रयत्न कीजिए। आजसे हम मैत्री भावनाका नवीन पाठ सीखेंगे।

> माकार्षीत्कोपि पापानि मा च भूत्कोपि दुःखितः।
> मुच्यतां जगदप्येषा मतिर्मैत्री निगद्यते॥

अर्थात्—कोई पाप न करे, कोई जीव दुखी न हो और सारा संसार मुक्त होजाय, यह मैत्री भावना हमारे हृदयमें सदा जगमगाती रहे। जो अपने सुखमें सुखी और दुःखमें दुखी हो, उसे ही हम अपना मित्र कहते हैं तब मैत्री भावनाका रहस्य समझनेवाले—को सारे संसारके दुःखमें दुखी और उसके सुखमें सुखी होना ही चाहिए। सारे संसारको अपना कुंटम्ब समझनेवाले आप सरीखे महात्माओंके उदाहरणको आंखोंके सामने देखकर भी जो हम आपके अनुसार नहीं चलते यही हमारा अज्ञान है—यही हमारा प्रमाद—है। इसी उच्च भावनाके समझनेकी हमें दरकार है।

हम इतने अनुदार और स्वार्थी होगये हैं कि अपने कुंटुम्बियों पर भी इस मैत्री भावनाका उपयोग नहीं करते। फिर सारे जैन समाजपर इसका दिखलाना तो हमारे लिए बड़ा कठिन है और उससे भी कठिन सारे संसारपर हमारी उदार बुद्धिका होना है।

आत्मवत्सर्वभूतेषु यः पश्यति स पश्यति।

अपने माफिक जो दूसरोंको देखता है वही वास्तवमें देखने वाला है। इसके अतिरिक्त सब अन्धे हैं। हे नाथ! हमारी भी उन्हीं अन्धोंमें गिनती है। हम मोह राजाकी जालमें फँसकर बावले बन गये हैं। हमारे इस बावलेपनको दूर कीजिए। हे प्रभो! हमें विवेक सिखाइए जिससे हम अपने बन्धुओंके साथ मैत्री कर सकें—उनके दुःख सुखमें समान भाग ले सकें।

दूसरी प्रमोद भावना है। प्रमोद—आनन्द—गुणवानोंको देखकर उत्पन्न होनेवाला सन्तोष—ज्ञानी पुरुषोंको देखकर होनेवाला आल्हा-

द-अधिक धर्मीको देखकर उत्पन्न होनेवाला पूज्यभाव-किसी तरह किसीको अच्छा देखकर पैदा होनेवाली खुशी-यही प्रमोद भावना है। यह गुणानुराग, यह प्रमोद, यह सन्तोष, यह आल्हाद, और यह पूज्यभाव आज हममें कहां? जहां जरा किसीको अच्छी स्थितिमें देखते हैं कि झटसे हमारे मलिन हृदयमें ईर्षाग्नि प्रज्वलित हो उठती है। हमारा हृदय इतना संकुचित और स्वार्थी बन गया है कि हम किसीके गुणका उत्कर्ष नहीं सह सकते। किसी-की विद्वत्ता हमसे नहीं देखी जा सकती। किसीकी बढ़ती हुई कीर्ति हमें अच्छी नहीं लगती, वह हरवक्त हमारी आखोंमें खटका करती है। उन गुणोंको हम प्राप्त नहीं कर सकें तो फिकर नहीं, वह विद्वत्ता हमें प्राप्त न हो तो कुछ चिन्ता नहीं और उस कीर्तिका हम सम्पादन नहीं कर सकें तो परवा नहीं, पर दूसरोंके गुण, विद्वत्ता और कीर्तिमें कालिमा-लांछन-लगाकर जबतक उसे अपने सरीखी नीच स्थितिमें न ले आते हैं तबतक हमारा चित्त कभी स्वस्थ नहीं होता। हमारे चित्तमें दूसरोंको नीच बनानेका माया-जाल सदा खेलता रहेगा ही। अहा! कैसा दारुण समय आया है जो गुण प्राप्त करनेकी और गुणवान् पुरुषोंके साथ प्रेम करनेकी हमें इच्छा नहीं होती। सच है आजतक हमने जिस बातका अभ्यास किया है यदि हम उसीमें मस्त रहें तो आश्चर्य क्या? नीतिकारने बहुत ठीक लिखा है कि **चिरंतनाभ्यासनिबन्धनेरिता गुणेषु दोषेषु च जायते मतिः** जब हमने दूसरोंके दोष निकालनेकी ही आदत सीखी है तब गुणोंको कैसे देख सकते हैं? अथवा देखें भी तो उनका अनुमोदन कैसे कर सकते हैं? हे दयानिधे! आपकी कृपासे

अब कुछ कुछ हमारी इस स्थितिका हमे ज्ञान होने लगा है। इसे हम अपना भाग्योदय समझते है।

हे दीनबन्धो ! आजसे हमारे ज्ञान नेत्र खोलिए, हमें गुणानुरागी बनाइए। हम सत्यके उपासक होना चाहते हैं। हमें जहां जहां गुण दीख पड़ें, जहां जहां उच्चता हो, जहां जहां महत्व मालूम हो और जहां जहां स्वार्थत्याग सूझ पड़े, वहां वहां उन गुणोंकी उपासना हम कर सकें ऐसी सुबुद्धि हमें प्रदान कीजिए। हममेंसे खोटा अभिमांन, खोटा छल और खोटा ज्ञानगर्व दूर कीजिए, जिससे हम इस प्रमोदभावनाका उत्तम गुण सीख सकें और हमारा समय बड़े पुरुषोंको नीचा दिखानेमें व्यतीत न होकर उन महान् आत्माओंके अनुसार चलनेमें उसका सदुपयोग हो।

हममें जैसे मैत्री और प्रमोद नहीं है उसी तरह करुणा भी नहीं है। अमुक दयाका पात्र है, यह कहनेमें हम बड़े बहादूर हैं। किसीको इसपर दया करनी चाहिये, यह भी हम कह देते हैं। पर क्या मजाल जो हम उसपर कुछ दया करें—उसकी मदद करें ? हमें भी उसपर दया करनी चाहिए यह विचार अभीतक हमें सूझा नहीं। दूसरेकी भलाईके लिए तकलीफ सहना हमने सीखा ही नहीं। सच्ची गरीबी दूर करनेके लिए दान देना हमने जाना नहीं। अपना बल निर्बलोंको देनेके लिए अथवा जुल्मी पुरुषोंके जुल्मसे उन्हें बचानेके लिए अपने बलका काममें लाना हमने सीखा नहीं। निष्काम बुद्धिसे दूसरोंपर दया करनेमें आन्तरिक कितना आनन्द है ? इसका अनुभव हमने किया नहीं। क्योंकि ऐसी निःस्वार्थताका अभी भी तो हमें खयाल नहीं है। 'किसीकी हिंसा मत

करो, बस, इतना ही हम सीखें हैं। स्थूलपने किसीके प्राणोंका नाश न करना इसमें हम धर्म समझे हुए हैं, इतना भी हमारा भाग्य है। पर मन, वचन और कायसे किसी जीवके प्राणोंमें उद्वेग हो उसमें भी हिंसा है, इस मर्मको—इस सिद्धान्तको—हममें बहुत थोड़े समझनेवाले हैं। हे प्रभो! हमें अभी और एक अच्छा—पाठ सिखानेकी आवश्यक्ता है.

हमें दयाके प्रत्येक काममें अपना हिस्सा देना पड़े ऐसा पाठ सिखाइए। हमारे हृदयपर असर करनेवाले उपदेश देनेकी जरूरत है कि " शक्ति होनेपर भी जो दयाके कार्यमें भाग नहीं लेते उन्हें एक तरहसे निर्दयताके कार्यमें भाग लेनेवाले समझना चाहिए। " ऐसी हममें दयाकी उच्च भावना होनी चाहिये। जहां दुःख दीख पड़े वहां उसके दूर करनेको हमें बाहर आना आवश्यक है। अपवित्रताको देश निकाला देनेके लिए पवित्रता हमें अपने साथ लानी चाहिए। अज्ञानीका अज्ञान दूर करनेके लिए ज्ञान हमे साथ लाना चाहिए। तभी हम दयाका सच्चा काम कर सकते हैं और हे दया सागर! आपके सच्चे भक्त भी फिर हम बन सकेंगे।

दीनेष्वार्तेषु भीतेषु याचमानेषु जीवितम्।
प्रतीकारपरा बुद्धिः कारुण्यमभिधीयते ॥

अर्थात्—दीन—गरीब—दुःखी, रोगी और मृत्युके मुखमें पड़े हुए जीवोंको उनके उन दुःखोंसे छुड़ानेकी बुद्धि और देश कालकी अपेक्षा उन्हें अन्न, पान, आश्रय, वस्त्र, औषधि, ज्ञान आदिके द्वारा

सहायता पहुँचाना इसे सच्ची करुणा अथवा दयाभावना कहते हैं। जो दया केवल शब्दोंके आडम्बरमें उलझी रहती है, जो दया केवल वाह वाहके लिए होती है, पर उससे किसी बेचारेका दुःख दूर करनेके लिए रंच मात्र भी हम अपना स्वार्थ नहीं छोड़ते, ऐसी दया केवल नाम मात्रकी दया है। अब तो हमे दयाके व्यवहारिक कामोंकी जरूरत है। जो दयाका काम करता है वही सच्चा दयालु है। इस सूत्रको—इस सिद्धान्तको—अब हमें प्रधान लेख बनानेकी आवश्यक्ता आ पड़ी हैं। हे करुणासागर! हे महात्मन्! हे दया-निधे! आप समुद्र हैं तब तो थोड़ासा जल अपने सेवकोंके लिए भी प्रदान करेंगे ही, इसमें कुछ सन्देह नहीं। उससे हमारा हृदयपात्र भर जायगा? कारण वह बहुत कम गहरा है और फिर हमे उसे अपने बन्धुओंके हितके लिए उपयोगमें लावेंगे। हे भगवन्! दया करके हमें दयाका पाठ सिखलाइए। हे नाथ! करुणाका स्वरूप दिखलाकर सब जीवोंपर करुणा करनेका गुण हमें पढ़ाइए।

चतुर्थ अर्थात् अन्तिम भावना जैन शास्त्रोंमें **माध्यस्थभावना** कही गई है। इस संसारमें बहुतसे ऐसे मनुष्य दीख पड़ते हैं जिन्हें सदुपदेश देना भी सर्पको दूध पिलानेके बराबर हो जाता है। वह उपदेश उनकी क्रोधाग्निको और भी अधिक भड़का देता है। ऐसे पुरुषोंके साथ कभी सम्बन्ध हो जाय तो अपनेको मध्यस्थ रहना चाहिए। अज्ञानसे—सच्चे ज्ञानके आभावसे—वे बेचारे बुरे मार्गमें भ्रमण करते हैं, इसलिए उनपर हमें दया करनी उचित है, और ज्ञान प्राप्त करनेकी उनकी स्थिति न होनेसे और भी अधिक वे दया-

के पात्र हैं। उनपर दया करना इसका यह अर्थ नहीं है कि उनके खोटे मार्गका पक्ष लेना, किन्तु उनकी निन्दा करनेका हमें अधिकार नहीं है। अपनेको इस विषयमें माध्यस्थभाव रखना चाहिए। निन्दा वा प्रशंसा हृदयमें न लाकर उनपर समानभाव रखना उचित है। यही माध्यस्थभावना है। हे प्रभो! यह भावना भी अभीतक हमारे हृदयमें उत्पन्न नहीं हुई। क्योंकि हमारा हृदय पक्षपाती है। निष्पक्षपात-पनेका धर्म हमने सीखा ही नहीं। "पक्षपातविनिर्मुक्तो ब्रह्म सम्पद्यते जनः" यह सूत्र थोड़े ही वक्तसे हमारे कानमें पड़ने लगा है। पर अभीतक यह ध्यानमें नहीं आता कि इसे अनुभवमें कैसे लाना चाहिए। हमारे धर्मके नेता विद्वान् लोग पक्षपातकी खेंचातानमें फँसे हुऐ हैं। उनसे भी इसके समझनेकी आशा नहीं की जा सकती। सच है—जब उनकी ऐसी दुर्दशा है तब हम सरीखे उनके शिष्य क्रूर सैतानके हाथ पड़ जावें तो इसमें आश्चर्य क्या? प्रतिदिन हमारे कानोंमें अभिमानकी मारामारीके, या अपनी तारीफके या दूसरोंकी निन्दाके समाचार पड़ते रहते हैं, आपके किये नेता—पट्टधर—लोग उपदेश भी वैसा ही देते हैं और स्वयं भी वैसे ही चलते हैं। हम अन्धे हैं तब धोखोंमें फँसकर अपने उन नेताओंके कहे अनुसार चलें तो इसमें हमारा दोष क्या? हमारे नेताओंकी यह स्थिति बहुत समयसे हमारे पीछे पीछे लगी हुई चली आ रही है। हे दयासागर! हमारे नेताओंको पक्षपात रहित मध्यस्थ दृष्टिवाले बनाइए या: उनका यह अयथार्थ मार्ग छोड़देना हमें सिखाइए। अब बहुत वक्ततक ये अज्ञानके पट्टे हमसे नहीं सहे जा सकते। अब बहुत समयतक इस बोझेको सिरपर हम

नहीं उठा सकते । हे दयागुरो ! इधर तो हमारे दुःखका—हमारी दुर्दशाका—सुननेवाला दीख नहीं पड़ता । इसलिए बारंबार आपसे प्रार्थना करते हैं कि यदि आप भी हमारी प्रार्थनापर ध्यान न देकर आंखकी ओर कान करोगे तो फिर हमारा कोई भी रक्षक नहीं रहेगा ।। हम अनाथ हो जावेंगे । हमारे रक्षक भक्षक होगये, नेता भी वैसे ही होगये, और जिनके पावोंमें अपना सिर रक्खा था वेभी उसे काटते नहीं हिचकते, तब कहिए हमारा आधार कौन ? कौन इस दारुण दशासे हमारा उद्धार करेगा ? हे नाथ ! इन भावओंनाका हमारे हृदयमें प्रवेश हो सके ऐसा बल हमें प्रदान कीजिए, जिससे हम सब बातोंको एक कौनेमें रखकर केवल आपका आश्रय प्राप्त करें—आपकी शरण आवें ।

माता कहो तो आप और पिता कहो तो आप, धन कहो तो आप और विद्या कहो तो आप, देव कहो तो आप और अकारणबन्धु कहो तो आप, मेरे हृदयमें तो जो कुछ महत्त्वकी वस्तु है वह सब कुछ आप ही हैं । इसलिए हे नाथ ! अब खुली तरह प्रकाशमें आइए और हे सूर्यसमान विभो ! इन बालकरूपी कमलोंको विकसित—प्रफुल्लित—कीजिए । इसके सिवा ये चारों भावनायें हमारे हृदयमें स्थान पा सकें और हम आपके कहे अनुसार चल सकें ऐसी सुबुद्धि प्रदान कीजिए । यह हामरी आपसे प्रार्थना है ।

धनवानोंका कर्तव्य ।

चला लक्ष्मीश्चला प्राणाश्चले जीवितयौवने ।
चलाचले च संसारे धर्म एको हि निश्चलः ॥

अर्थात् नीति शास्त्रका कथन है कि लक्ष्मी अथिर और अस्थायी है । जीवन और यौवन देखते देखते नाशको प्राप्त हो जाते हैं । इस प्रकारके चलायमान असार संसारमें धर्म ही एक निश्चल और सार भूत है । भावार्थ—कोई मनुष्य इस बातका गर्व न करे कि मेरी लक्ष्मी सदा शाश्वती बनी रहेगी, मेरे दशों प्राण स्थायी रहेंगे । अर्थात् मैं चिरकाल जीऊंगा और यौवनशाली बना रहूंगा । यह सब भ्रम-विलास है । कर्मकी उपाधि जनित सामग्री है । जो वस्तुस्वरूपके ज्ञाता होते हैं, जिनका भावी अच्छा है उन्हें इस बातका विश्वास रहता है कि इस जीवका हित करने वाला एक मात्र धर्म ही है । इसी कारण चार प्रकारके पुरुषार्थोंमें धर्मका प्रथम ग्रहण है, जिसके प्रभावसे अर्थ, काम तथा मोक्ष पुरुषार्थकी सिद्धि हो सकती है । संसारमें सभी मतावलंबी धर्मको श्रेष्ठ वर्णन करते हैं और उसीकी प्राप्तिसे आत्माका हित समझते हैं । देखा जाता है कि जब विपत्ति सवार होती है तब सभी उसकी निवृत्तिके लिये धर्मकी शरण ग्रहण करते हैं । परन्तु ज्योंही चंगे हो जाते हैं पुनः धर्मको विसार देते हैं । इसीसे कहा है कि " जो सुखमें प्रभुको भजे दुःख काहेको होय " । आज कल रूढ़िप्रवाहसे इन्द्रियोंके वशवर्ती होकर हम लोगोंने जड़ लक्ष्मी-को ही सुखका कारण मान रक्खा है, परन्तु यह लक्ष्मी चंचलावत् चपल है; पुण्यके क्षय होते ही विलीन हो जाती है । वास्तविक

सुख मोक्ष लक्ष्मीकी प्राप्तिसे होता है। इसलिए श्रीमान् पुरुषोंको उचित है कि वे अपने द्रव्यको सुकृतमें लगावें, जो परम्परा मोक्षका साधन है। आप जानते हैं कि जिन्होंने पूर्व जन्ममें दान दिया है, इस जन्ममें उन्हींपर लक्ष्मीकी कृपा है। भावार्थ—जब आप "जैसा दिया वैसा पाया" इस नियमके ज्ञाता हैं तो फिर जन्मातरमें लक्ष्मी निधान बननेके लिये इस जन्ममें देनेसे क्यों हाथ संकोचते हैं? संसारमें सूर्य, चंद्र, नदी, धन, वृक्ष सभी परोपकार परायण दीख पड़ते हैं। गाय भैंसको घास खिलाते हैं तो बदलेमें आपको दूध मिलता है। इसीसे यह कहावत सच मालूम होती है कि "इस हाथ दे इस हाथ ले"

नीतिकारोंने कहा है:—"दान भोग अरु नास तीन होत गति वित्तकी" इसमेंसे दानकी तो यहांतक आवश्यकता दिखाई गई है कि इसके बिना गृहस्थीका गृह स्मशान सदृश कहा गया है। इस बातका निषेध नहीं है कि आप विषय सुखकी सामग्री एकत्रित न करें। परन्तु लोभकषायसे रागकी प्रचुरताको कम करनेके लिये धर्मकार्यमें भी द्रव्यको लगाना चाहिये। ध्यानमें रखिये कि यही आपके लिये परलोक सहायक पाथेय होगा। जिन कुटुम्बियोंके भरण पोषणमें तुम्हारा अधिकांश द्रव्य व्यय हो रहा है, अथवा जिनके लिये पापारंभ करके तुम अपने माथे पापकी पोट बांध रहे हो, वे सब स्वार्थके साथी है, पापका फल तुम्हें ही भोगना पड़ेगा, "जो करेगा सो भरेगा" यह कहावत भी आपको शिक्षा दे रही है। इस कारण सावधान हो जाइए और न्यायपूर्वक, धर्मसे विमुख न होकर द्रव्य कमाइए।

यह बात भी सदा काल ध्यानमें रखनी चाहिये कि कृपणता कँजूसी करना बहुत बुरा है। कृपणता तीव्र पापबंधकी करनेवाली है। कृपण निंद्य होता है, उसका मुख देखना भी अमंगलीक गिना जाता है। कृपणको सब मक्खीचूस, कंजूस आदि निंद्य वचनों द्वारा संम्बोधन करते हैं। " चमड़ी जाय पर दमड़ी न जाय, इस प्रतिज्ञाको कृपण निरतिचार पाल्ते हैं। कृपणका द्रव्य ही प्राणाधार और द्रव्य ही तारन तरन है। इतना होनेपर भी खेद है कि लक्ष्मी उनके पास स्थिर नहीं रहती। उन्हें याद रखना चाहिए कि, जब नवनिधि चौदह रत्नके स्वामी चक्रवर्ती, नारायण आदिकी संपदा भी पुण्यके क्षय होनेसे नष्ट हो जाती है तब हम किस गिनतीमें हैं ? देखते देखते बड़े बड़े लखपती, क्रोड़पती कौड़ीपति बन गये, उनके दिवाले निकल गये और वे सहसा अविश्वास, अनादर और अपयशके पात्र बन गये हैं। लक्ष्मी जब स्थिर रहती ही नहीं फिर यह कृपणता क्यों ? जो न तो स्वयं लक्ष्मीको अपने काममें लाते हैं और न उससे दूसरोंका उपकार करते हैं फिर आश्चर्य है कि वे क्यों धनके स्वामी गिने जाते हैं। विचारके साथ देखा जाय तो वे धनके रक्षक मात्र हैं। ऐसे संकीर्णहृदयी पुरुषोंसे किसीका भला नहीं हो सकता। दैव इस राहुसे जैन श्रीमानोंके मुखचंद्रको ग्रसित न होने दे।

यद्यपि पूर्वकालके सदृश व्यापार और धनसंचय जैनियोंके पास नहीं है तो भी अभीतक व्यापारकी निपुणतामें जैनी प्रख्यात हैं। परन्तु अब इस ख्यातिको भी अकर्मण्य जैनियोंने लड़कियोंको बेच-

नेके व्यापारसे कलंकित कर दिया है। जैनियोंमें उदारता भी है। इसीसे प्रत्येक वर्ष प्रतिष्ठाओं, विवाहों, नुकतों, फिजूलखर्चियों, और अनावश्यक कामोंमें इनका लाखों रुपया खर्च होता है। पर इस उदारतामें एक अवगुण है। वह यह कि ये लोग वर्तमानकी आवश्यकतानुसार द्रव्य व्यय नहीं करते। इसीसे उन्नति उनसे दूर दूर भाग रही है। बड़े शोककी बात है कि जब विवाहशादियोंमें लाखों रुपये खर्च किये जाते हैं और जिसमें बहुतसा फजूल खर्चीमें व्यय होता है तब क्या धर्मकार्यके लिये हमें हजार, दो हजार भी नहीं देना चाहिये ? परन्तु कहीं नहीं देखा गया कि अमुक लक्ष्मीपुत्रने लग्न संस्कारकी खुशीमें सहस्र दो सहस्र किसी शिक्षालय, अनाथालय, ब्रह्मचर्याश्रम आदिमें दिये हों। इस पोलका--इस अंधेरका--भी कोई ठिकाना है ? इस बातकी समालोचना जैनमित्र, जैनहितैषी, सत्य-वादीके सुयोग्य सम्पादक अनेकबार करते रहे हैं परन्तु सुने कौन ?। इसी प्रकार मानकी मरम्मतमें, निरावश्यक प्रतिष्ठाओंमें जैनी भाइयोंका बहुत द्रव्य व्यय होता जा रहा है। जिस ग्राम तथा नगरमें एक, दो, पाच, दश मंदिर बने हुए हैं क्या आवश्यकता है कि वहीं पुनः मंदिर बनवाये जावें ? जब उन्हीं स्थानोंमें अनाथालय, पुस्तकालय, पाठशाला, विधवाश्रम आदिकी बड़ी भारी जरूरत है तो क्या उनमें द्रव्य खर्च करनेसे पुण्य नहीं होता ? यश नहीं होता ? उन्नति नहीं होती ? परंतु ये बातें जानते हुए भी, मानता कौन है ?। श्रीमानोंके पीछे एक मानकषायका पिशाच लगा हुआ है। उसकी प्रेरणासे उन्हें मंदिर बनाकर ही तृप्ति होती है। एक दृष्टांत, जिससे मैं परिचित हूं, लिखा जाता है। सिवनी (छपारा)

में धनवान् परवार जैनी भाइयोंका अच्छा समुदाय है। जिन्होंनें सिंघई, सवाई संघई, शेठ, श्रीमंतशेठकी पदवियां खरीदनेके लिये एक ही ठिकाने गगनस्पर्शी सोलह सतरह मंदिर बनवा डाले, पर बेचारी पाठशालाने बड़ी कठिनतासे अब कहीं जन्म लिया है। ठीक यही हाल सब देशोंका है। पदवियोंकी पिपासा शांत करनेके लिये धनाढ्य जैनी भाई अपना लाखों रुपया स्वाहा कर डालते हैं सो तो रहा परन्तु देशदेशान्तरोंसे जो सज्जन प्रतिष्ठोत्सव देखने आते हैं उनका भी लाखों रुपया रेलवे कम्पनियोंके उदर गव्हरमें प्रविष्ठ हो जाता है। क्या ही अच्छा हो यदि श्रीमान् गण आवश्यकतापर ध्यान देवें और यही द्रव्य कालेज, महाविद्यालय, पाठशाला, पुरातत्वसंग्रह, शारदालय, अनाथालय आदिकी स्थापनामें लगावें ? ऐसा होनेसे जैनियोंकी दिनदूनी रात चौगुनी उन्नति हो सकती है।

मैं धनाढ्य भाइयोंसे एक बातका प्रार्थी हूं और पूछता हूं कि क्यों साहब आप क्या चाहते हैं ? पदवी, शोभा, यश, कीर्ति, वाह वाह कि और कुछ ? तो क्या वेश्यानृत्य, आतिशबाजी, बखेर, जीमणवार, निरावश्यक मंदिरनिर्माण आदिसे ही आपको यश मिल सकता है या उसका और भी कोई प्रशंसनीय मार्ग है ? आप इसका यही उत्तर देंगे कि लौकिक शोभाके लिए हमें सब कुछ करना पड़ता है। परन्तु कभी आप इस बातका भी विचार करते हैं कि जैन जाति क्यों दिनोंदिन अवनतिको प्राप्त होती जा रही है ? क्या जातिकी उन्नति करनेसे कम शोभा होती है ? क्या आप नहीं चाहते कि यह सार्वधर्म अर्थात् संसारका कल्याण करनेवाला जैनधर्म दिग्दिगन्तमें चमके, उसकी प्राचीनता, मनोहरता और स्वाभाविक-

-

ताकी ध्वजा फरहरे, उसके अनुपम उच्च कोटिकी विद्वता दर्शक न्याय, सिद्धान्त, व्याकरण, वैद्यक, नाटक, काव्य, चम्पू, ज्योतिष, साहित्य आदिके ग्रंथोंका प्रचार सब जगहोंमें हो और जैनधर्मसे परिचित होनेवाले अपक्षपातसे श्रद्धानपूर्वक आत्मकल्याणके हेतु उसे स्वीकार करें? क्या आपका इतना विशाल हृदय नहीं है? क्या स्वार्थकी बेडीसे जकड़े हुए पड़े रहनेसे ही तुम्हारा उद्धार होगा? नहीं, कदापि नहीं। जैनधर्मको प्रत्येक वर्णवाला धारण कर सकता है। यह किसी जाति विशेष मात्रका धर्म नहीं है।

इस समय पुण्य प्रतापसे आपके पास उन्नतिका सब सामान तैयार है, पर कमी है केवल आपके प्रयत्नकी। याद रक्खो यह जमाना रूढ़िप्रवाहमें बहे जानेका नहीं है। इस परीक्षा प्रधान युगमें बहुतसे मुमुक्षुगण सच्चे धर्मको अंगीकार करेंगे, उन्हें आपको अपने धर्मकी समीचीनता दर्शानी पड़ेगी। विज्ञानके प्रचारने जगतमें अद्भुत जागृति पैदा करदी है। तुम्हारे लिये जैनधर्मकी प्रभावना करनेके वास्ते ऐसा अनुकूल समय फिर न मिलेगा। क्योंकि अनेक अंग्रेज, आर्यसमाजी, बंगाली, विद्वान् जैनधर्मसे मोहित होकर उसे अंगीकार कर रहे हैं। यह जानते हुए भी मोहनिद्रासे आपके नेत्र न खुलें तो बड़ा आश्चर्य है। भाइयो! जागो, उठो, कर्तव्यको विचारो और कमर कसके कुछ परोपकार और प्रभावना करनेमें दत्तचित्त हो जाओ। निष्कामवृत्तिसे कार्य करो। मानापमानकी परवा मत करो। अपनी झूठी तारीफ करना अच्छा

नहीं, किन्तु कुछ करके दिखाओ। देखो—गुलाब, चमेलीके पुष्प, इतर आदि सुगंधित पदार्थ अपने मुखसे अपनी तारीफ—आत्मप्रशंसा नहीं करते। किन्तु उनकी सुगंधसे मोहित होनेवाला मनुष्य स्वयं उनकी सराहना करने लगता है। जब आपभी निस्वार्थवृतिसे शुभ कार्यमें लगेंगे तब संसार स्वयं आपकी प्रशंसा—वाह वाह—करने लगेगा।

संसारमें आदर्श पुरुषकी परम आवश्यकता होती है। क्या आप श्रीमान् जैनजातिभूषण दानवीर सेठ माणिकचंदजी हीराचदजी जे. पी. वंबईको नहीं जानते हैं? वे कितने परोपकारी हैं। उन्होंने वंबई, अहमदाबाद, उदयपुर, रतलाम जबलपुर, सूरत आदि शहरोंमें बोर्डिंगस्कूल, पाठशाला, धर्मशाला, औषधालय, आदि स्थापित किये हैं, जिनके प्रभावसे शिक्षाप्रचार और उन्नतिमें बड़ी सहायता प्राप्त हुई है। जब उन्होंने ऐसी उदारतासे उत्साह पूर्वक लाखों रुपये शिक्षाके प्रचारमें लगाये हैं तो क्या उनकी इस निःस्वार्थ जाति सेवाको देखकर न्यायशील ब्रिटिशगवर्नमेंटनें तथा जैनमहासभाने उन्हें जे. पी., जैन जातिभूषण और दानवीर आदि पदवियोंसे भूषित नहीं किया है? किंतु किया है। इसलिए जैनजातिके अन्यान्य धनवानोंसे मेरी प्रार्थना है कि आप उक्त सेठ साहबका अनुकरण करें। विश्वास, रक्खो कि जब आप आवश्यकताको देखकर द्रव्यका सद्व्यय करोगे—कुछ कर दिखाओगे—तो आपके लिये वहुत सी आदरणीय पदवियां तैयार हैं।

आप जानते हैं कि विना कार्यकर्ताओंके और द्रव्यके कोई कार्य सिद्ध नहीं हो सकता। भावार्थ—जैनसमाजकी उन्नति निःस्वार्थ विद्वानों और धनवानोंके हाथमें है। विना शिक्षाप्रचारके किसी

जाति तथा धर्मकी उन्नति न हुई और न हो सकती है। इसलिये मैं आपका ध्यान इस आवश्यक विषयकी ओर आकर्षित करना चाहता हूं। अपनी अपनी जातिमें विद्याप्रचारके लिये अंग्रेज, पारसी, मुसलमान, बंगाली, अमेरिकन, आदि एक मुश्त लाखों करोडों रुपयोंका दान कर डालतें हैं, पर खेद है कि यह देखते हुए भी धनी जैनी भाइयोंकी उदारता इस काममें बहुत ही कम देखनेमें आती है। हमारी जातिके श्रीमानोंका निवासस्थान अजमेर, इंदौर, झालरापाटन, बंबई, कलकत्ता, खुर्जा, खुरई आदिमें है, जो अच्छे लखपती, क्रोड़पती गिने जाते हैं तथा जिन्हें वार्षिक लाखोंकी आमदनी होती है, क्या वे चाहें तो सहजमें लाख–दोलाख रुपया विद्यादानमें नहीं दे सकते? अवश्य दे सकते हैं। परन्तु विधिकी गति अति गहन है। लक्ष्मीका वास उनके पास है जो ज्ञानदानमें देना नहीं चाहते और जिनका विशाल हृदय देनेके लिये सदा प्रफुल्लित रहता है उनसे लक्ष्मी रूठी हुई है। अर्थात् उनके पास द्रव्य नहीं है। बस, इसी भंवरमें नाव आ फंसी है। दूसरी जातिवाले अपने अपने कालेज बनवा रहे हैं और अपने को–राज्यमान उन्नतिशील कर रहे हैं। परंतु जैन जातिके–धनवानोंके हृदयमें ऐसी उमंग ही नहीं उठती कि जैनकालेज भी अवश्य होना चाहिये। कालेज तो दूर रहा, हाईस्कूलका भी अभी ठिकाना नहीं है। फिर कहिये कैसे उन्नति हो और कैसे शिक्षाका प्रचार हो? आशा है कि श्रीमानगण विद्यावृद्धिके कार्यमें अपना द्रव्य लगावेंगे। क्योंकि ज्ञान दानका फल केवलज्ञानकी प्राप्ति होना बताया गया है। सौभाग्यकी बात है कि अब कुछ कुछ जैनजातिमें अभ्युदयके शुभ चिन्ह दीख पड़ने

-च्गे हैं। सच्चे हृदयसे जैन धर्मकी उन्नति चाहने वाले और बहुतसे हितैषी उत्साही विद्वान्, त्यागी, धर्मात्माओंने अनेक उत्तमोत्तम संस्थाएं स्थापित की हैं, जिनमें विना स्वार्थ और परोपकार वृत्तिसे वे प्रशंसनीय कार्य कर रहे हैं। इन्हींमेसे कुछ विद्वानोंके तथा संस्थाओंके नाम मैं धन्यवाद सहित प्रकाशित करता हूं। श्रीब्रह्मचर्याश्रमहस्तिनापुर, जिसमें श्रीयुत भगवानदीनजी, गेंदनलालजी, वावा भागीरथजी वर्णी दिलोजानसे कार्य कर रहे हैं। श्रीजैनसिद्धान्तपाठशाला मोरेना, जिसमें प्रातःस्मरणीय स्याद्वादवारिधि, न्यायवाचस्पति पंडित गोपालदासजी वरैया उच्च कोटिके धार्मिक ग्रंथ पढ़ा रहे हैं। इस महापाठशालासे अच्छे अच्छे विद्वान् तैयार हुए हैं और हो रहे हैं। श्रीजैनशिक्षाप्रचारकसमिति जयपुरके विद्यालयमें सैकड़ो जैन विद्यार्थी धार्मिक और लौकिक विद्या पढ़ रहे हैं। इसके लिये वावू अर्जुनलालजी सेठी वी. ए. ने अपना जीवन अर्पण कर है। इसी प्रकार ऐलक पन्नालालजी, ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजी, कुंवर दिग्विजयसिंहजी निःस्वार्थवृत्तिसे धर्मोपदेशकका कार्य कर रहे हैं, पत्र सम्पादन कर रहे हैं। सज्जनो! मेरे अनुरोधसे इन्हें एकवार हृदयसे धन्यवाद दो और श्रीजिनेन्द्रसे प्रार्थना करो कि ये अमूल्य रत्न जैन समाजको चिरकाल पर्यंत अलंकृत किये रहें। शिक्षाप्रचारके लिये संस्कृत जैनग्रंथोंका सरल और मनोहर भाषानुवाद करके उन्हें मुद्रित और प्रकाशित करनेवाले श्रीयुत पं. पन्नालालजी वाकलीवाल और श्रीयुत कवि नाथूरामजी प्रेमी समाजकी सच्ची सेवा कर रहे हैं इसलिए वे भी धन्यवादके पात्र हैं।

अन्तमें जातिके उदार धनिकोंसे मेरी यह प्रार्थना है कि आप उपर्युक्त संस्थाओंको तन, मन और धनसे पूरी पूरी सहायता दोगे तो आपको बड़ा भारी पुण्य होगा, आपका धन पाना सफल होगा, आपका यश फैलेगा और आपकी आत्माको परम शांति और सुख प्राप्त होगा। ये संस्थाएं बिना द्रव्यके, बिना ध्रुवफंडके आपके आधारसे, आपकी आशासे चल रही हैं। बहुतसे विद्यार्थी इनमें पढ़नेको आना चाहते हैं परन्तु बिना द्रव्यकी सहायताके सबकी अर्जियां ना मंजूर की जाती हैं। इसलिये मेरी यह प्रार्थना है कि आप-लोग विवाहके समय, प्रतिष्ठाओंके समय, पुत्रोत्पत्तिकी खुशीके समय इन्हें न भूलें और सदैव मासिक, वार्षिक सहायतासे इन्हें सिंचन करते रहें। यदि कर्तव्य वश कुछ अनुचित लिखा गया हो तो श्रीमान् मुझे क्षमा करेंगे।

जैनजातिका हितैषी—

बुद्धमल पाटनी, इंदौर।

सन्तानशिक्षा।

(गताङ्क ४–५ से आगे)

(९) जो वस्तु बालकोंको देने योग्य नहीं है, अथवा जिस वस्तुके देनेके लिए इन्कार कर दिया है उसे फिर कभी न देनी चाहिए। चाहे बालक उसके लिए कितने ही रोवें। उनके रोनेसे डरकर एक दिन भी नियमके तोड़ देनेसे फिर वे सदा रोनेका

भय दिखाकर उस वस्तुके देनेको वाध्य कर देते हैं, और उसी दिनसे उन्हें माता पिता आदिकी बातपर अविश्वास हो उठता है। इसके विपरीत उनके रोनेकी जब कुछ परवा नहीं की जाती है तब वे दो चार दिनतक तो रोते हैं पर लगातार असफलता प्राप्त होनेसे फिर उनकी अनुचित प्रार्थना करनेकी एब छूट जाती है और न फिर रोनेका उन्हें जोर रहता है।

(१०) अपने योग्य आमोद, प्रमोद, गीत, वाद्य और खेलना आदिके द्वारा बालकोंमें मानसिक चंचलता आती है, इसलिए उनसे बालकोंको दूर रखनेकी कभी चेष्टा नहीं करनी चाहिए। और जिसके द्वारा उनमें किसी तरहका दुर्गुण न आवे ऐसी सब प्रकारकी उन्हें शिक्षा देनी चाहिए। पर यह बात अच्छी तरह याद रखनी चाहिए कि सब कामोंकी सीमा है। इसलिए ऐसी शिक्षाएं वहींतक देनी चाहिए कि वे उनमें लीन होकर अपनी मान मर्यादा न भूल जायँ। इस शिक्षासे हमारा मतलब केवल उन्हें विषयसे परिचित करानेका है न कि उन्हें दुर्गुणताके घर बनानेका।

(११) बालक कभी कोई बुरा काम कर बैठे अथवा उसके करनेका उसे बुरा अभ्यास पड़ जाय तो उसके दूर करनेकी एक दिनमें ही चेष्टा करना अथवा उसके लिए कोई कठिन दण्ड देना उचित नहीं। वह दोष जैसे एक दिनमें नहीं आया है वैसे ही उसका दूर करना भी एक ही दिनमें संभव नहीं। बालकोंको ऐसे बुरे कामोंके दोष अनेक दृष्टान्त द्वारा समझा देना चाहिए। जब वे बुरे कामोंमें दोष देख लेंगे तब स्वयं उनसे अपनेको बचा सकेंगे।

(१२) वालकोंको किसी बुरे कामके लिए दण्ड देना हो अथवा उनपर शासन करना हो तो वह एकान्तमें देना वा करना चाहिए। दूसरोंके सामने वालकका तिरस्कार करनेसे वा उन्हें मारनेसे उसका असर उनके चित्तपर बुरा पड़ता है। इसके सिवा एक वात और है—वह यह कि छोटेसे अपराध या दोषके वदलेमें भारी दण्ड न दिया जाय। इस ओर विशेष लक्ष्य रहना उचित है। जवतक हम यह न जानलें कि वालकका कितना अपराध है तवतक दण्ड देनेकी अपेक्षा न देना ही उचित है। दण्ड देते समय माता पिताको आन्तरिक कितना दुःख होता है यह वात जवतक वालकोंके ध्यानमें न आ जाती तवतक दण्ड देनेका कुछ फल नहीं निकलता है। उन्हें माता पिताके उस समयके दुःखका ज्ञान लेना आवश्यक है। अपने लिए उन्हें दुखी देखकर वे अपनेको बुरे कामोंकी ओरसे हटानेकी फिर स्वयं कोशिश करेंगे।

(१३) संसर्गके दोषसे ही वहुधा करके वालकोंका चरित्र विगड़ता है। चार पांच वर्षकी अवस्थाके वाद ही वालक वालिका अपने साथीके दोष और गुणका अनुकरण और अनुसरण करने लगते हैं। उस समय माता पिताके उपदेशकी अपेक्षा अपने साथियोंके व्यवहारका उनके चरित्रपर अधिक प्रभाव पड़ता है। इसलिए माताका कर्तव्य है कि वह उनपर विशेष निगाह रक्खे, जिससे वे दुष्ट वालकोंके साथ मिल न सकें और न उनकी संगति कर सकें। एक वक्त जो बुरी आदत पड़ जाती है फिर उसका दूर करना कठिन हो जाता है।

(१४) बालकोंको बहुत देरतक नौकर अथवा नौकरानीके पास रहने देना उचित नहीं है। ऐसी बहुतसी माताएं होती हैं जो बालक बालिकाओंको दूसरोंके पास रखकर अपनेको सुखी समझती हैं। यह बात बहुधा देखी जाती है कि तीन चार वर्षके बालक भी नौकर अथवा नौकरानीके संग ही आहार करते हैं और उन्हींके संग सोते हैं। दिनका अधिक भाग उनके साथ ही बीतता है। बालकोंका हर वक्त उनके साथ रहना जैसे नीति शिक्षा देनेके लिए अन्तराय—विघ्न—है वैसे ही शारीरिक और मानसिक अवनतिका भी कारण है। इस विषयमें एक विद्वान्का कहना है कि "यदि तुम अपनी संतानके पालन और शिक्षाका भार किसी नौकरके हाथ सौंपते हो तो थोड़े ही समयके बाद, नौकरके छोड़ देनेपर उसके बदलेमें तुम्हें सहज ही दूसरा नौकर प्राप्त हो जायगा" अर्थात् जो काम तुम नौकरसे लेते थे अब उसे तुम्हारी सन्तान ही कर दिया करेगी। क्योंकि तुमने तो उसे कुछ भी शिक्षा नहीं दी है। उसके हृदयपर उसी नौकरके कर्तव्यका प्रतिबिम्ब पड़ा है।

(१५) बालकको किसी विषयका उपदेश देते समय जहांतक संभव हो उसके प्रत्यक्ष दृष्टान्त दिखानेकी कोशिश करनी चाहिए और जहांतक बन सके छोटी छोटी मनोरञ्जक कहानियोंके द्वारा उपदेश देना उचित है। "अग्निमें हाथ नहीं देना" इस उपदेश—शिक्षा—के देते वक्त बालककी एक अंगुली अग्निसे छुआकर "अग्नि जला देती है" ऐसा विश्वास उसे करा देना चाहिए। ऐसा करनेसे एक दिनके अतिरिक्त फिर ऐसा उपदेश न देना पड़ेगा। "झूठ बोलनेमें बड़ा दोष है" "चोरी करना महापाप है" केवल ऐसा उन

देश देनेसे कुछ लाभ नहीं हो सकता। मनोहर कहानियोंके द्वारा ऐसे बुरे कामोंके गुण दोष समझाना आवश्यक है। बालक स्वभावहीसे कहानियोंसे प्रेम करते हैं। कहानियोंके साथ साथ उपदेशको वे बड़ा मन लगाकर सुनते हैं और सहज ही उसे हृदयमें धारण कर लेते हैं।

(१६) बालकपनमें धर्म और नीतिकी शिक्षा न देनेसे, माताको स्वयं अपनी संतानका चरित्र गहन न करनेसे फिर यह त्रुटि विद्यालय अथवा और कहीं भी नहीं मिटनेकी। इसीलिए मैंने सन्तानके लिखने पढ़नेकी ओर अधिक ध्यान न देकर पहले उसके चरित्र गठनपर कुछ लिखा है। और और शिक्षाके लिए इतनी कालाकालके विचारकी आवश्यकता नहीं जितनी धर्म और नीति शिक्षाके लिए आवश्यक है। क्योंकि बालकपनमें धर्म और नीतिकी शिक्षा न दीजानेपर फिर उसका मिलना नितांत दुरूह हो जाता है।

सन्तानको किस प्रणालीसे लिखने पढ़नेकी शिक्षा देनी चाहिए किस तरह उसके मनकी गति और प्रवृत्ति समझकर उसे व्यवसाय वाणिज्यमें नियुक्त करना चाहिए ? इन सब विषयोंका ज्ञान मातामें होना जरूरी है। शिक्षा, आदि कई पुस्तकें शिक्षाप्रणाली सिखानेकी है, उन्हें देखना चाहिए। शिक्षाके सम्मन्धमें कुछ उपयुक्त बातें यहां भी लिखी जाती हैं।

(१) बालकोंको सबसे पहले अपनी मातृभाषाकी शिक्षा देना उचित है। वर्तमान समयमें मानमर्यादा और विज्ञान आदि

विषयके ज्ञान प्राप्त करनेके लिए यद्यपि इंग्रेजी भाषाकी जरूरत होने-पर भी हमारे लिए हिन्दी भाषाका सीखना सबसे पहला कर्तव्य है। बालकोंको मातृभाषाकी शिक्षा देना सहज और सुखकर है। दूसरे यह भी बात है कि उसे पहले मातृभाषाका ज्ञान हो जानेपर फिर दूसरी भाषाका ज्ञान प्राप्त करना बहुत सरल और सुखसाध्य हो जाता है।

(२) विद्वानोंने मनुष्यकी मानसिक वृत्ति समूहको दो विभागोंमें विभक्त किया है। बुद्धिवृत्ति, और नीति वा धर्मवृत्ति। इसलिए बालकपनसे ही जिस तरह उक्त दोनों प्रकारकी वृत्तियोंका समुचित संचालन द्वारा उत्कर्ष बढ़ने लगे उसी ओर अधिक दृष्टि रखनी चाहिए।

मनुष्यकी जितनी वृत्तियां हैं उनका उत्कर्ष उचित संचालन द्वारा होता है। एक बात विशेष है, वह यह कि सब बालकोंकी सब वृत्तियां एक सरीखी तेजस्विनी नहीं होती हैं। किसीकी न्याय पढ़नेमें, किसीकी व्याकरण पढ़नेमें, किसीकी गणित पढ़नेमें, किसीकी साहित्य पढ़नेमें, किसीकी चित्र खींचनेमें और किसी किसीकी नाना प्रकारकी शिल्पविद्याके सीखनेमें अधिक प्रयत्नशालिनी होती है। पर मातापिताको बालपनसे ही अपनी सन्तानको सब तरहकी शिक्षा देनेकी ओर दृष्टि रखनी उचित है।

(३) लिखने पढ़नेकी शिक्षा देनेके पहले बालक जिन जिन पदार्थोंको सदा देखते हैं उनके नाम, आकृति, वर्ण और गुण आ-दिकी शिक्षा उन्हें पहले देनी चाहिए। कल्पना करो कि किसी बालकके हाथमें तुमने एक काचका टुकड़ा देखकर उससे

पूछा कि इसका नाम क्या है? यदि वह उसका नाम बतला सकता है तब तो अच्छा ही है, अन्यथा तुम्हें उसे उसका नाम बताकर फिर क्रमसे उसके स्वच्छ, चिकना, रंगीन आदि गुण अथवा उसमें किसी तरहकी रंगीनता न हो तो सादा, निर्मलता आदि गुण एक एक करके समझा देना चाहिए। केवल मुखमात्रसे ही किसी पदार्थके गुण दोष समझाना ठीक नहीं। उसका काचसे हाथ छुआकर उसकी चिकनाई, आखोंपर रखकर उसकी निर्मलता वा रंगीनता आदि समझा देना उचित है। उस समय यह भी उचित है कि पीतल, तांवा, कांसी आदि पदार्थोंके साथ काचके गुणादिकी भिन्नता समझा दी जाय। फिर उसे यह भी बतला देना चाहिए कि ये पदार्थ किस किस काममें आते हैं।

(४) शिक्षा पद्धति बहुत तरहकी है, पर उन सबमें प्रश्नोत्तरके रूपमें शिक्षा देनेकी पद्धति बहुत अच्छी है। यह जैसी सुगम है वैसी ही आनन्द जनक भी है। एक साथ बहुत बालकोंको इस पद्धतिसे शिक्षा देनेसे न तो बालकोंको कष्ट होता है और न अध्यापकोंहीको।

कल्पना करो, तुमने अपने हाथमें शेमलका फूल लेकर एक बालक से पूछा कि—राजेन्द्र! बोलो, यह फूल किसका है? उसने कहा "शेमल" का। इसका रंग कैसा है? उसने कहा "लाल" ऐसे सुन्दर फूलका लोग क्यों आदर नहीं करते? मुझे मालूम नहीं। हेम! क्या तुम इसका उत्तर दे सकते हो? हेमने कहा इसमें गंध नहीं है। इसके बाद राजेन्द्रके हाथमें शेमलका फूल और जुहीका फूल देकर—राजेन्द्र! एक एक फूलको सूंघकर देखो कि कौन कैसा है?

इतनेमें हेम बोला—इस छोटे और सादे फूलमें कैसी सुन्दर गन्ध है और इतने बड़े लाल फूलमें कुछ भी गन्ध नहीं। राजेन्द्र ! अच्छा, यह बताओ कि ऐसे ही एक फूलका और भी नाम बतला सकते हो ? वह बोला—पलासके फूलमें भी गन्ध नहीं होती है। हां ठीक कहते हो।

इस तरह दो तीन फूलके सम्बन्धमें उसे समझाकर फिर नाना जातिके फूलोंके नाम, उनके गुण और रंग आदिकी शिक्षा देनी चाहिए। इसीके साथ उसे यह भी समझा देना उचित है कि गुणोंके न होनेपर केवल रूपका आदर नहीं होता। दृष्टान्तके लिए केवल फूलोंके बाबत लिख दिया है। इसी तरह फल, लता, पत्ते, पशु, पक्षी, और जल-जन्तु आदिकी शिक्षा देना उचित है। यह बात हर वक्त याद रहनी चाहिए कि जिस समय बालकोंको शिक्षा दी जांय उस समय दो चार पदार्थ तो सामने रहना ही चाहिए। "हाथी बड़ा बलवान होता है, वह किसीसे डरता नहीं है।" केवल ऐसा कह देनेसे कुछ लाभ नहीं होता। बालकको हाथीके पास लेजाकर उसकी आकृति, गति और उसके बलकी परीक्षा कर दिखाना जरूरी है।

(९) बालकोंको पहले वर्ण परिचयकी शिक्षा देनी उचित है। हमारे देशमें ऐसा न कर वर्ण परिचयके पहले लिखनेकी शिक्षा दी जाती है। यह प्रणाली बालकोंके लिए अच्छी नहीं है। पहले—वर्ण परिचय न होनेसे लिखना सिखाना उसका समय बर्बाद करना मात्र है। दूसरे—अन्यके लिखे हुए अक्षरोंको जबतक वह न समझेगा तबतक उसपर हाथ फेरना उसे बड़ा कष्ट कर जान पड़ेगा। तीसरे—इस पुरानी पद्धतिके अनुसार लेख द्वारा वर्ण परिचय करानेके

लिए वहुत समयकी आवश्यकता है, इत्यादि अनेक प्रकारकी तकलीफें हैं। इसलिए बालकोंको पहले पढ़ाकर वर्ण परिचयकी शिक्षा देना उचित है।

(६) क, ख, इत्यादि वर्णमालाका लिखना आरंभ करनेके पहले बालकोंको सीधी, त्रिकोण, चतुष्कोण रेखाकी आकृति तथा वृत्तक्षेत्र आदिके खींचनेकी शिक्षा देनेसे वे क, ख, को सहज ही लिख सकेंगे। अक्षरको लिखकर उसपर हाथ दोहरानेकी पद्धति अच्छी है। इसी तरह एक साथ सब अक्षरोंके लिखनेकी शिक्षा न देकर क्रम क्रमसे एक एक अक्षर सिखाना अच्छा है। बालक जब क अक्षरको ठीक रूपसे लिखने लगे उसके वाद ख का सिखाना जरूरी है। असुन्दर दश अक्षरोंके लिखनेकी अपेक्षा एक सुन्दर अक्षरका लिखना आजाना अच्छा है। कारण—पहले ही आड़े टेढ़े असुन्दर अक्षरोंके लिखनेका अभ्यास हो जानेसे फिर उनमें सुन्दरता आना कठिन हो जाता है। अर्थात्—पहले जिस अक्षरका लिखना सिखाना हो उसे खूब सुन्दर लिखानेका बालकको अभ्यास करा देना वहुत आवश्यक है।

(७) कौड़ी, कूंगचे, पैसा, वा इसी तरहकी किसी और वस्तुको लेकर गणना तथा जोड़, बाकी आदिकी शिक्षा देनी चाहिए। अंक लिखकर वा केवल मुँहसे गणितकी शिक्षा देनेसे बालक गणनाके विषयमें कुछ भी हृदयंगम नहीं कर पाते हैं। किन्तु केवल पक्षीकी तरह कण्ठस्थ कर लेते हैं। कौड़ी आदि लेकर अंककी शिक्षा देना बालकोंके लिए आनन्द जनक और सरल साध्य है।

(८) वायु सेवनके लिए बालकोंको बाहिर घुमाना चाहिए। वायुसेवन स्वास्थ्यको बहुत लाभ पहुंचाता है। हमारे समाजमें स्त्रियोंके लिए बाहिर घूमने जानेकी पद्धति नहीं है। इसलिए इस विषयका भार पिता अथवा और किसी आत्मबन्धुको लेना उचित है। बाहिर घूमने जानेके समय बालक रास्तेमें चारों ओर जिस किसी वस्तुको देखते हैं उसके सम्बन्धमें नाना तरहकी बातें पूछने लगते हैं। उस समय जो बालकके साथ हो उसे चाहिए कि उनकी सब बातोंके उत्तर देनेकी पूर्ण कोशिश करे। प्रसिद्ध विद्वान् जॉन स्टुअर्ट मिलके पिताने इसी पद्धतिसे मिलको अनेक जानने योग्य विषयोंकी शिक्षा दी थी।

(१७) बालक कोई अपराध या अन्याय कार्य करे तो उसका दंड भी उसे उसीके अनुसार देना उचित है। उसी तरह कोई अच्छा काम करे तो उसका उसे पुरस्कार देना चाहिए। तिरस्कारकी अपेक्षा पुरस्कार अधिक उन्नतिका सहायक है। अच्छे कामके करनेपर यदि सत्कार न किया जाय तो उससे उत्साह नहीं बढ़ता है।

सन्तान शिक्षा और चरित्र गठनके सम्बन्धमें माताका क्या कर्तव्य है इस विषयकी खूब आलोचना की जा चुकी। सन्तान शिक्षा और चरित्र गठनके विषयमें माताका कितना उत्तरदायित्व और गुरुत्व है यह बतलाना ही हमारे इस लेखका उद्देश्य है। उत्तरदायित्व और गुरुत्वका अनुभव हो जानेसे फिर अपने कर्तव्य सम्पादनमें उपायोंकी कमी नहीं रहती। हम आशा करते हैं कि हमारे जातीय बालकोंके माता पिता इस लेखको खूब ध्यान पूर्वक पढ़कर इसके

अनुसार अपनी सन्तानके भविष्य सुधारकी चिन्ता करेंगे। हमें यह अच्छी तरह ध्यानमें रखना चाहिए कि जबतक स्वयं माता पिता सन्तान सुधारकी और लक्ष्य न देंगे तबतक उनकी सन्तान आदर्श बन सकेगी इसमें सन्देह है। सन्तान सुधारके लिए पिताकी अपेक्षा माताका कहीं अधिक महत्व है। वह अपनी सन्तानको उच्चसे उच्च आदर्श, विद्वान् बना सकती है। नेपोलियनबोनापार्टकी अपूर्व प्रतिभाशालिनी बुद्धि और शक्ति देखकर एक प्रसिद्ध विद्वानने उससे पूछा था कि तुममें इतनी बुद्धि कैसे हुई? उसके उत्तरमें उसने कहा था कि " इसका कारण मेरी माता है। मेरी मा यदि पढ़ी लिखी विदुषी नहीं होती तो यह कभी संभव नहीं था कि मुझमें ऐसी शक्तिका विकाश होता।" हमारे पाठक नेपोलियनके इस कथनको हृदयमें अंकित करेंगे तो समाजका बहुत भला हो सकेगा। *

विषविवाह।

(छटे अंकसे आगे)

(३)

लोभ

जहां रूप लावण्यमयी रमणीका निवास है वहां किसनचन्द सरीखे अनेक महात्माओंका आविर्भाव हो जाता है। पर लोभ सबका समान नहीं होता। कोई उसकी सुन्दर रूप मधुरिमापर मुग्ध होकर अपने स्त्री, पुत्र, कन्यादिको तक जलांजलि दे बैठता है और कोई उसके

---

* गृहिणीकर्तव्यसे अनुवादित और परिवर्तित।

सर्वस्व हरणकी इच्छासे उसके साथ प्रेम करके अपने परिवार वर्गके भरण पोषणमें भी कंजूसी—लोभ—करने लगता है। शोक—दुःखमय संसारमें यह बात सदासे चली आती है। आज जो ऐश्वर्यके राजसिंहासनपर बैठकर राज्यके मदसे उन्मत्त है, कल वही पथ पथका भिखारी होकर पश्चात्तापकी ज्वालामें जलने लगता है। हमारे किसनचन्दकी भी यही दशा है। यद्यपि वह केसरकी रूपराशिपर मुग्ध है तब भी उसे एक चिन्ता दुखी किये हुए है। जब केसरकी माका चरित्र अच्छा नहीं है तब कैसे यह निश्चय हो कि रात दिन उसीके पास रहनेवालीका इन सब बुरे कारणोंसे चरित्र सुरक्षित रह सका हो? और ऐसी हालतमें यदि मैं उससे विवाह करलूं तब समाज मुझे क्या कहेगा? लोग मुझे कितना धिक्कार देंगे? और यह भी तो ठीक नहीं कि मैं इधरसे अपने मनको हटालूं। रंभाकी बातें जब जब मुझे याद आती है तब तब कैसा दुःख होता है यह मैं ही जानता हूं। जरासी छोकरीके दिलमें मेरा इतना अपमान? और वह भी मेरी स्त्री होनेपर? जो हो, मुझे कुछ न कुछ उपाय तो करना ही होगा।

किसनचन्द छिप छिप कर केसरके घरपर जाने लगा। उसने केसरकी माको बहुत कुछ लोभ देकर उसे इस बातके लिए राजी करली कि केसर आपके ही अधिकारमें रहेगी। इधर केसरके लिए उसने कई सोने आदिकी रकमें बनवादी। केसर किसनचन्दका अपनेपर ऐसा प्रेम देखकर उसके कहे माफिक चलने लगी। उसने अपनी सब मर्यादाको गन्धा पानी समझकर बहादी। जिस लोमने

केसरकी मासे तक अन्याय करा लिया तब केसर—असमझ छोकरी—उसका कैसे सम्वरण कर सके? अच्छे अच्छे भूषणोंका पहरना, सुन्दर सुन्दर वस्त्रोंका पहरना और उत्तम उत्तम खाना पीना किसे अच्छा नहीं लगता? जहां बड़े बूढोंकी अकल चकरा जाती है वहां छोटी बालिकापर कुछ असर न पड़े यह संभव नहीं। उसपर भी जब कि जीती राक्षसी माताका जिसपर सर्वाधिकार हो। किसनचन्दके इस प्रपंचने—मायाजालने—केसरके आत्माको शान्त कर दिया। रंभाका आग्रह पत्र उसके आनन्द जलकी धाराके प्रवाहमें बह गया।

पूर्व निश्चयके अनुसार नेमिचन्द रंभाको साथ लेकर किसनचन्दके घर पर आया। पर हाय, वहां केवल एक अपरिचित युवकके सिवा और कोई उसे दीख न पड़ा।

किसनचन्दको देखकर कुछ उदासीनतासे युवकने कहा कि महाशय! कहिये आप किस लिए आये हैं? कुछ न कह कर चुपचाप क्यों घरमें घुसे आ रहे है? कहिए तो आपका नाम क्या है?

कुछ नम्र होकर नेमिचन्दने कहा कि मेरा नाम नेमिचन्द है। किसनचन्द मेरे जमाई हैं। उनसे मिलनेको आया हूं।

युवक जोरके साथ हँसकर बोला कि हां किसनचन्द आपके जमाई हैं? इस समय तो बहुतसे किसनचन्दको अपना जमाई बताकर यहां आते रहते हैं। क्या आप भी उन्हींमेंसे एक हैं? जाइए, अब यहांसे कृपा कीजिए, मुझे अधिक विरक्त न कीजिए।

युवकके इस असभ्य भाषणसे नेमिचन्दके हृदयपर बहुत भारी आघात पहुंचा। वह धीरे धीरे वहांसे बाहिर निकल कर एक पड़ौसीके

घरपर आया। पड़ौसके लोग उसे बड़े आदरसे बैठाकर क्रम क्रमसे किसनचन्दका गुणगान सुनाने लगे। सुनकर नेमिचन्दने बड़े दुःखके साथ किसनचन्दके वहां अपना जाना और युवकके दुर्व्यवहारकी बात अकपट रूपसे उन्हें सुनादी। सुनकर उनमेंसे एकने कहा— आपके गुणी जमाईजीने घरका सब भार उसीके हाथ सौंप रक्खा है। इस समय एक कुलटा स्त्रीके घरपर मौज उड़ाते होंगे। उनकी इच्छा उसको लड़कीके साथ विवाह करनेकी है। किन्तु हम लोगोंके व्यंग वचनोंके भयसे वैसा कर नहीं सके। अब तो वे यहां रहते तक नहीं।

नेमिचन्दने कहा—तो बतलाइए अब उपाय क्या है? आप दश जने हैं, इस लड़कीका कुछ ठिकाना लगा दीजिए।

पड़ौसी—उपाय क्या करें? आप एक दो दिन यहां ठहर कर किसनचन्दकी दशा देख लीजिए। हमें तो नहीं जान पड़ता कि उनकी मति गति अब फिरेगी।

इच्छा न रहनेपरभी नेमिचन्द और रंभा वहां दो दिन ठहर गईं। भाग्यसे दूसरे दिन प्रातःकालही किसनचन्द अपने घर आये। युवकने नेमिचन्द और रंभाके आनेका सब हाल उनसे कह सुनाया।

किसनचन्दने कहा—आये हैं तो गये कहां?

युवकने कहा—आपको न देखकर वे चले गये।

किसनचन्दने फिर कहा—गये तो अच्छा ही हुआ।

केसरकी भुवन मोहिनी रूपराशि इस समय किसनचन्दके हृदय मन्दिरमें विराज रही थी। वे उसकी रूप मधुरिमाके मोहमें फँसे हुए थे। उसीके मनोरंजनमें लगे हुए थे।

नेमिचन्द् किसनचन्दके आनेका हाल सुनकर उनके घर गया। और कुशल मंगलके बाद उसने कहा कि आपके मिलनेके लिए तो मैं यहां आया, पर आपके तो दर्शन ही नहीं? मैं कलसे बेचारे पूनमचन्दके घरपर हूं। यहां आया तो था, पर कर्मकी लीलासे रह नहीं सका। किसनचन्द! तुम अपनी पत्निके साथ सुख पूर्वक संसार यात्राका निर्वाह करो। ईश्वर है, धर्म है और पुण्य पाप है। मेरी बात सुनो—अब रंभाको अच्छी तरह रखना, दीन हीन कन्याके हृदयमें दुःखकी ज्वाला जलाकर उसके सुख मार्गका कण्टक न बनना।

किसनचन्द बोले—आप इसे अपने साथ घर ही लिवा लेजाइए। यहां रहनेसे इसे सुखकी जगह दुःख ही होगा। इससे अब मेरी माया ममता नहीं रही। आप कृपा करके मेरे आग्रहकी रक्षा कीजिए। इसके भरण पोषणके लिए मैं एक हजार रुपया दिये देता हूं। यह कह कर किसनचन्दने एक हजार रुपयोंकी थैली नेमिचन्दके सामने रख दी।

सुचतुर नेमिचन्दने रुपया अपने हस्तगत करके कहा कि रुपयोंसे तो उसके मनका दुःख नहीं मिटेगा, कहो क्या करें? जान पड़ता है यह दैवी लीला है, रंभाके अदृश्यका फल है।

किसनचन्दने कहा—इस समय तो रुपया लेकर यहांसे जानेकी कृपा कीजिए। यदि इसके अदृष्टमें पतिका सुख लिखा होगा तो यह अवश्य ही उसे भोगेगी।

नेमिचन्दने भी जरा कठोर स्वरसे कहा कि अवश्य भोगेगी, किसनचन्द! यदि मुझमें कुछ भी मनुष्यपना होगा तो इस निरपराधिनीके छोड़नेका फल तुम्हें भी हाथों हाथ मिल जायगा। याद रक्खो,

रंभाके लिए एक न एक दिन तुम स्वयं पश्चात्ताप करोगे। तुम्हारी इस पापेच्छाकी अवधि नहीं। तुम नराधम हो, तुम्हारे मुखका देखना भी पाप है। यह कहकर नेमिचन्द वहांसे चलता बना। रंभाकी सब आशापर पानी फिर गया। पिताके साथ वह पीछी अपने घर चली आई। जब नेमिचन्द चला गया तब किसनचन्दने युवकसे कहा कि रंभाके विवाहके पहले यदि तुम्हारा सम्बन्ध हो जाता तो फिर मैं कभी उससे विवाह नहीं करता। जो हो, होगया वह अब अपने वशका नहीं।

युवकने कहा—यह तो होता ही।

किसनचन्द युवकसे बोले—देखो, केसर और दो रकमें मांगती है। उस दिन उसे दो हजारकी रकमें बनवा दी थी, घर खरीद दियां था, फिर वही तकादा? खैर, आज तो मैं और उसके लिए हजार रुपया लाया हूं। पर रतनचन्द! मैंनें तो वह नेमिचन्दको दे डाला। देखो, तुम उसे जाकर समझा दो कि इस प्रकार चलनेसे तो मेरी पचास हजारकी रकम कुछ ही दिन ठहरेगी।

युवकने कहा—यह अब आपको समझाना न पड़ेगा। ऊः देखते हो केसरकी इच्छा तो मिटती ही नहीं है। थी तो एक गरीबकी लड़की, पर अब तो इतनी रकमें पहरलीं, घर बन गया और फिर-भी वहीका वही तकादा? आप अब दो चार दिन तक चुप हो रहिए। वहां न जाइए। झख मार कर फिर वह स्वयं आकर तुम्हारे पांवोंमें पड़ेगी।

किसनचन्दने यही किया। दो चार दिन केसरके घर नहीं गये। पाठक! युवकका कुछ परिचय दे देना आवश्यक जान पड़ता है। हृदय यन्त्रमें जब विषय वासनाका घात प्रतिघात होने लगता है तब उसके लोभसे मनुष्य कितना घृणित और बुरा कार्य करने लगता है, यह बात युवकके परिचयसे अच्छी तरह जानी जा सकेगी। सुनिये, युवकका नाम है रतनचन्द। अवस्था तीस पैंतीस वर्षके लग भग। निवासस्थान किसनचन्दके मकानके पीछे ही। किसनचन्दके साथ रंभाका विवाह हो जानेके बाद परस्परमें उनके प्रतिदिनकी खटपटका हाल रतनचन्दके कानोंमें सुन पड़ता था। इस सुयोगमें रतनचन्द अपनी स्त्रीकी सुन्दरतापर किसनचन्दका मन मुग्ध करनेके लिए उसे वहां भेजने लगा। और आप भी वहां जाने आने लगा। इससे दोनोंमें बड़ा सम्बन्ध होगया। रतनचन्दकी स्त्रीको जब उसके इस अधमोचित कार्यकी थाह लगी तब उस सती, साध्वी, पुण्यवतीने अभिमान, लज्जा और घृणाके वश होकर आत्महत्या करके नरपिशाच पतिके हाथसे अपने पवित्र धर्मकी रक्षा करली। यह अयश हालां कि देश व्यापी होगया था तब भी रतनचन्द समझता था कि इस घटनाका हाल किसीको मालूम नहीं है। इस-प्रकार पत्निके वियोगके बाद रतनचन्दने बड़ी जालसाझीसे केसरकी माको अपने हाथमें की और धीरे धीरे उसकी लड़कीके प्रेमपाशमें किसनचन्दको फँसा दिया। उसने विचारा कि केसरके चरणोंमें किसनचन्द अपना धन, मान सभी कुछ समर्पण करके उसकी रूप भिक्षाके लिए फिर निरन्तर व्याकुल रहा करेगा और उससे अपना भी काम खूब अच्छी तरह चलेगा। आखिर हुआ भी ऐसा ही।

इस संसारमें स्त्रीके असाधारण सौन्दर्याग्निमें कौन भस्म नहीं हुआ है ? साधारण मनुष्योंकी कथा जाने दीजिए, बड़े बड़े ऋषि, महात्मा-तक स्त्रीके चंचल कटाक्षसे अपने स्वरूपको भूल बैठे हैं। मनुष्यके खूनके प्यासे व्याघ्र भी वाघिनीके प्रेममें उन्मत होकर उसके कटाक्ष बाणोंसे बिंध जाता है। स्त्रीके चरितका जान लेना कठिन है। न जाने कौनसी अनिर्वचनीय, अचिन्तनीय शक्ति उसके नेत्रोंमें रक्खी गई है ? नही तो उसके तेजमें इतना आकर्षण क्यों होता? स्त्रीकी रूपाग्निमें मनुष्यके गर्व—मान—बल, बुद्धि, धन, विक्रम आदि सब कुछ भस्म हो जाते हैं। हमारे किसनचन्दकी भी यही हालत हुई है। इधर किसनचन्द और रतनचन्दने विचार करके कुछ दिनोंके लिए केसरके घरपर अपना जाना आना बन्द कर दिया, उधर नेमिचन्द और कन्हैया डाकू सलाह करके वहां जानेकी कोशिश करने लगे।

नेमिचन्दने कन्हैयासे कहा—कन्हैया, मैं अच्छी तरह जान चुका हूं कि अब रंभा और किसनचन्दका मन नहीं मिलेगा। तूं मेरी सहा-यता कर। मुझे कुछ लड़ाके लोग दे जिससे मैं किसनचन्दकी बुद्धि ठिकाने लादूं।

कन्हैया बोला—जरा धैर्य रखिए। कीड़ीके मारनेके लिए धनुषकी आवश्यकता नहीं होती। आगे हो, हम केसरके घर जाकर उसका चाल चालन देख आवें।

नेमिचन्द—केसरका चरित जाननेसे मतलब? वह कुपथ गामिनी कुलटा स्त्री। उसके रूपकी हाटमें पांव रखनेसे भी मन कलुषित होता है।

कन्हैया—इस समय स्थानादिके विवेचनकी जरूरत नहीं। हमारे कार्य सिद्धिकी मूल आधार वही पापिनी गणिका केसर है।

नेमिचन्द् क्या कहा? केसर, गणिका?

कन्हैयाने हँसकर कहा—केसर गणिका? क्यों इतना आश्चर्य कैसे हुआ? दुर्गन्धमय पंकिल सरोवरके जलमें मनके मुग्ध करनेवाली और नयन विमोहिनी कमालिनी विकसित होती है। क्या उससे अपने इष्ट कार्यकी सिद्धि नहीं होती? गुलाबके फूलमें कांटा समझकर उसकी दिगन्त व्यापिनी सुगन्धिसे मुग्ध होकर कौन उसे नहीं उठाता?

नेमिचन्दने कहा— उठाता है, पर क्या उसके कांटे उसके हाथमें नहीं लगेंगे?

कन्हैया—लग सकते हैं, पर चतुरतासे सब काम सिद्ध किये जा सकते हैं।

नेमिचन्द—तो चलो, मैं गुप्त रीतिसे केसरका घर भी देख चुका हूं। अब बहुत ढूढनेकी तकलीफ न उठानी पड़ेगी।

कन्हैया—अच्छा ही किया। हां कुछ द्रव्यकी जरूरत पड़ेगी। खैर, मैं ही लिए लेता हूं। तुम चलनेकी तैयारी करो।

नेमिचन्द—मैं तो तैयार ही हूं। तुम्हारी ही देरी है।

यह सुनकर कन्हैयाने अपने एक नौकरको बुलाया और कहा- भीतरसे दोसौ रुपया ले आओ और कोचवानसे कह दो कि वह गाड़ी तैयार करे। मुझे कुछ जरूरी काम है। इसलिए दो दिनके लिए बाहर जाता हूं। तुम खूब सावधान रहना। यदि जरूरत होगी तो फिर तुम्हें भी साथ ले चलूंगा। सब तैयारी होगई। नेमिचन्द और

कन्हैया गाड़ीमें बैठकर रवाना हुए। तीन चार घण्टेमें वे गंगापुर जा पहुंचे।

दो तीन दिनसे किसनचन्दको अपने यहां आता न देखकर केसरके दिलमें कुछ खटका पैदा होगया। उसने सोचा कि रुपयोंके लिए उनपर एक साथ इतना जोर देना उचित नहीं जान पड़ता है। अब वे मेरे पास नहीं आवेंगे। अथवा न भी आवें तो इससे मुझे हानि क्या? मैं देखनेमें कुरूपा तो नहीं हूं। जब पाप पथमें ही पांव धरा है तब जैसे होगा कुछ पैसा कमाना ही होगा।

इस प्रकार विचार करते करते केसर अपने घरके पास बगीचेमें घूमनेको चली गई। केसर किसनचन्दकी कृपासे सुखी होनेपर भी प्रति दिन रंभाके भेजे हुए पत्रपर विचार करती थी। आज वह सुन्दर वस्त्राभूषण पहन कर बगीचेमें गई है। वहां उसने रंभाके पत्रको बारंबार पढ़ा। पढ़नेसे उसके दिलमें अनेक तरहकी चिन्ताएं उत्पन्न होने लगीं। वह फिर क्षण भरके लिए भी वहां नहीं ठहर सकी। जल्दीसे आकर अपने शयन मन्दिरमें जा सोई।

उस समय संध्या देवी तिमिर रूप वस्त्र पहन कर धीरे धीरे प्रभाव जमाने लगी, कितनोंने अपने अपने घरोंमें दीपक जला दिये, कितने जलानेका उपक्रम करने लगे। इसी समय एक गाड़ीका शब्द सुनकर केसरकी मा घरके बाहर आ खड़ी हुई। किन्तु हाय, वह किसनचन्द और रतनचन्दकी जगह कन्हैया डाकूका भयकारक भीम-काय, प्रशस्त ललाट और गांभीर्य पूर्ण मुखमण्डल देखकर न जाने क्या विचारने लगी।

किसनचन्द प्रति दिन गाड़ीमें बैठकर उसके यहां आते थे। किन्तु आज दो दिन होगये वे आये नहीं। इसीलिए केसरकी मा जहां जरासा गाड़ीका शब्द सुनती है कि झटसे बाहर दौड़ आती है। उसे देखकर कन्हैयाने कहा—क्यों केसर यहीं रहती है क्या?

उसकी मा बोली—हां यहीं रहती है।

कन्हैया नेमिचन्दका हाथ खींचकर घरके भीतर जाने लगा, इतनेमें बुढ़िया बोली—महाराज! वह दो जनोंकी रक्षिता है। वे लोग दो दिनसे नहीं आये, पर आज आवेंगे। जान पड़ता है आप बड़े लोग हैं। बड़ा सुख करके आये हैं। आपको पीछे लौट जानेके लिए भी नहीं कह सकती।

कन्हैयाने कुछ हँसकर कहा कि यदि वह दो जनेकी रक्षिता है तो हम भी उसकी इच्छा पूरी कर सकते हैं। हमारे पास भी धनकी कमी तो हेही नहीं।

बुढ़ियाने कहा—आप कहांसे चले आते हैं?

कन्हैयाने कहा—हरिपुरसे। हम वहांके जमींदार हैं। प्रत्येक रात्रिके उसे सौ रुपया हम दे सकते हैं। अर्थात् दूसरे जो देते हैं उससे दूना हम देनेको तैयार हैं।

केसरकी मा दिलमें बहुत खुश होकर उन्हें घरमें लिवा लेगई। वह मन मनमें विचारने लगी कि रतनचन्दने शुभ क्षणमें ही किसनचन्दको यहां आनेसे रोका। उसकी इस बुद्धिमानीसे केसर आज भिखारिणी नहीं हो सकती। यदि इसी तरह वह दोचार रईस पुरुषोंको और भी अपनावेगी तो थोड़े ही दिनोंमें किसनचन्दसे भी कहीं अधिक धनशालिनी बन जायगी।

केसर बड़ी सुन्दरी है। अच्छे २ वस्त्र भूषणादिक पहरनेपर तो उसकी रूपराशि और भी खिल उठती है। उसकी मा कन्हैया और नेमीचन्दको लेकर केसरके पास पहुँची। केसर उस वक्त पलंगपर सोई हुई थी। उसका पृथिवीतक आलुलायित कुन्तलकलाप अपूर्व शोभा दे रहा था। उनके पावोंकी आवाजसे केसर एकदम चमक कर उठ बैठी। उसकी मा उसके कानोंमें न जाने क्या कह कर चली गई। केसरने उन दोनोंसे बैठनेके लिए अभ्यर्थना की। कन्हैया बैठ गया। नेमिचन्द उसे धीरेसे कुछ कह कर चला गया। उसे जाता देख कर केसर बोली—वे क्यों जा रहे हैं? उन्हें बुला लीजिए न?

कन्हैयाने कहा—वह हमारा नौकर है। इसलिए चला गया। हमारे साथ यहां बैठना उसका उचित भी तो नहीं दीख पड़ता।

केसर बोली—तो जाने दीजिए। मैंने सुना है कि आप अच्छे जमींदार हैं। आपने मुझ दासीका घर पवित्र किया। कहिये इसके बदलेमें मैं क्या आपका सत्कार करूं? आपने जो यहां पदार्पण किया है इसे मैं अपना सौभाग्य समझती हूं।

कन्हैयाने कहा—केसर! मैं बहुत दिनोंसे तुझसी सुन्दरीकी खोजमें था। बहुत कुछ प्रयत्न करनेपर तुझे देख पाया हूं। सुन, अबसे तू अपने पूर्व प्रेमीको विदा करदे। वह तुझे जो देता है उससे भी अधिक मैं दे सकूंगा।

केसरने इसे अपना भाग्य समझकर कहा—हो सकेगा।

कन्हैया बोला—ऐसा न करनेपर यहां मैं आ भी तो नहीं सकता।

केसर—आप मेरे शरीरपर भूषण देखते हैं यह उन्हींका दिया हुआ है और यह घर भी उन्होंने मुझे दे दिया है।

कन्हैया—यह सब छह सात हजारका धन होगा। तू कितने दिनोंसे उनके पास रहती है?

केसर—लग भग तीन चार वर्षसे।

कन्हैया—इससे और क्या अच्छा होगा कि मै तुझे प्रति दिन सौ रुपया दिया करूंगा। इस तरह तो एक महीनेमें ही तू तीन हजारकी मालकिनी हो जायगी। मेरी जमीदारीकी आय चालीस हजारकी है। उससे तुझे तीन हजार रुपया मासिक देनेसे मुझे कुछ भार भी नहीं जान पड़ेगा। मेरे स्त्री पुत्र आदि कोई भी नहीं है। यदि तू मेरे मनके अनुसार चलेगी तो सब सम्पत्तिकी स्वामिनी भी मैं तुझे ही बनाऊंगा, अभी यह सौ रुपया ले। मै इस समय बहुत देरतक ठहर नहीं सकता। आज तेरे साथ परिचय संभाषण हो ही चुका है। कलसे फिर प्रति दिन आया करूंगा। यह कहकर कन्हैया चला गया।

केसरकी मा छुप कर सब बातें सुन रही थी। उसका हृदय खुशीके मारे फूल गया। उसने मनमें विचार किया न जाने केसरकी यौवन मधुरिमापर कितनी जानें न्यौच्छावर होंगी?

(अपूर्ण)

सच्चा-सुधार।

आजकल जिधर देखिये उधर सुधारकी आवाज सुनाई देती है। बड़े बड़े शहरों और नगरोंसे लेकर छोटे छोटे कस्बोंतकमें "हमारा

सुधार कैसे हो ?" यह मंत्र रटा जाता है। इतना ही नहीं लेकिन वह कार्यमें भी परिणित होने लगा है।

साधारणतः सुधारका अर्थ 'सुक्रम' अथवा 'सुव्यवस्था' होता है। पर इसके अन्दर एक गूढ़ अर्थ भरा हुआ है। सुधारका आरम्भ अंग्रेजोंके सहवास और उनकी शिक्षाके प्रतापसे हुआ है। पुराने विचारके मनुष्य सुधार नहीं चाहते। पर नये विचारवाले चाहते हैं। जूने विचारवाले सुधार नहीं चाहते यह उनकी भूल है। लेकिन उनसे भी ज्यादे भूल नये सभ्य लोगोंकी है। कारण वे सुधारका अर्थ सुक्रमको छोड़कर यूरोपियन फेशनका अनुकरण करके, उसकी चरम सीमापर चढ़ जाना करते हैं। इसीसे पुराने सांचेके मनुष्य घबड़ाते हैं। वे ऐसे सुधारसे अपने धर्मके छिन्न भिन्न हो जानेका समय निकट देखते हैं। और इसी डरसे स्त्रीशिक्षा आदि सुधारोंके भी वे विरोधी बन रहे हैं। पर यह दोनोंकी गलती है। क्योंकि न तो सुधारका यह अर्थ है कि अपने देश, धर्म, कुलकी मर्यादा छोड़कर यूरोपियन बनजाना और न सुधारके न चाहनेका यह मतलब है कि पुरानी स्थितिमें पड़े पड़े सड़ा करना। तब प्रश्न उठेगा कि सुधार क्या चीज है? मेरी बुद्धिके अनुसार सच्चा सुधार शिक्षाका प्रचार है। शिक्षाके विना किसी प्रकारका भी सुधार होना संभव नहीं। शिक्षा रहित मनुष्य कूपमंडूकके समान है। विना शिक्षाके, किसी धर्म, देश, जाति एवम् मनुष्यका अभ्युत्थान नहीं हुआ है। यह शिक्षाहीका प्रताप था कि हमारे प्राचीन आर्यगण, सब प्रकारसे उन्नतिकी चरम सीमापर पहुँच चुके थे, हमारा भारतवर्ष सब प्रकारसे सुख सम्पन्न था।

यह शिक्षाहीका बल है कि आज यूरोपवासी उन्नतिके सोपान-पर आरूढ हैं। शिक्षाहीके आधारसे आज छोटासा जापान सब देशोंका शिरोमणि गिना जाने लगा है और वह शिक्षाहीकी शक्ति होगी जब अन्य राष्ट्र भी अपनी उन्नति करनेमें समर्थ होंगे। इससे सिद्ध हुआ कि शिक्षाका प्रचार सच्चा सुधार है। शिक्षामें भी हमारे देशके लिए स्त्री शिक्षाकी बहुत भारी आवश्यकता है। जबतक स्त्रीजाति शिक्षासे संस्कारित होकर सुधर न जावेगी तबतक किसी प्रकारका सुधार हो भी तब भी वह अधूरा है, उससे हमारा पूर्ण उत्थान नहीं हो सकता। अकेले चीनहीको देखिये, जहां कुछ वर्ष पहले स्त्रीशि-क्षाको लोग बुरी दृष्टिसे देखते थे, स्त्री—जातिको पढ़ाना पापमें शा-मिल था, माता, पिता, कन्याओंको दूसरोंकी जायदाद मानते थे और उनका कम उम्रमें विवाह कर देना ही वे अपने कर्तव्यकी इतिश्री समझते थे। इसी कारण वहां नाना प्रकारकी कुरीतियां एवम् वहमी विचारोंने स्त्रीजातिमें घर कर रक्खा था। लेकिन वहीं आज स्त्रीशिक्षाका प्रचार बड़ी तेजीसे बढ़ रहा है। दश वर्ष पहले वहां एक भी कन्यापाठशाला नहीं थी; परन्तु इस समय छोटे छोटे कस्बोंतकमें पाठशालायें, और स्त्रीविद्यालय खुल गये हैं। सैंकड़ों स्त्रियां दूसरे देशोंमें विद्याध्ययन करने जा रही हैं और वे अपने कार्यसे संसारको मुग्ध कर रहीं हैं। हमारे यहां और एक बात देखिये कि साल दरसाल कितनी ही सभा, समितियां होकर उनमें हानि-कारक रिवाज़ बंद करनेके प्रस्ताव पास होते हैं। कुरीतियों-के हटानेपर बहुत जोर दिया जाता है। लेकिन फल यह होता है कि उनके अनुसार कार्य नहीं होता। क्योंकि उन रिवाजोंमें बहुत

भाग स्त्रियोंसे सम्बंध रखनेवाला है। स्त्रियां ही उनकी संचालिकायें हैं, उन्हें बंद करना न करना उन्हींके हाथ है। अतएव जबतक उन्हें शिक्षाके द्वारा यह ज्ञात न होजाय कि कुरीतियोंके सद्भावसे क्या हानि हो रही है? उनके बंद करनेसे क्या लाभ हो सकता है? अपनी भावी प्रजाकी किस प्रकारसे उन्नति हो सकती है? वह कैसे सुमार्गगामी बन सकती है? धर्मके तत्व क्या हैं? उनके विरुद्धाचरणसे आज हमारी कैसी अधोगति होगई है? गृहस्थ धर्ममें क्या क्या खूबियां हैं? पति और पत्निका क्या सम्बंध है? इसी संसारको स्वर्गधाम बनाकर हम परलोकको कैसे सुधार सकती हैं? और हमारा कर्तव्याकर्तव्य क्या है? जैन जातिमें जबतक शिक्षाके द्वारा इस प्रकारका ज्ञान होकर, सच्ची गृहिणी, आदर्श माताएं एवम् श्राविकायें न बनने लगेंगी तबतक कदापि सच्चा सुधार नहीं हो सकता।

अतएव यदि आप अपने देश, अपनी जातिका सच्चा सुधार चाहते हैं तो स्त्रीशिक्षाका प्रचार बढ़ाकर अपनी भावी सन्तानके सुधारनेकी कोशिश कीजिए। आप डूबे सो तो डूबे अब अपनी भावी प्यारी सन्तानको तो सुखी बनाइए।

रेशमीलाल सेठी भानपुरा.

सम्पादकीय विचार।

१–सुधारकी आड़में शिकार।

अपना सुधार सभीको अच्छा लगता है। वह समाज, वह देश अभागा है जो अपना सुधार नहीं चाहता। अपनी

या अपनी जातिकी या अपने देशकी उन्नतिके उद्देश्यको लेकर सुधारक बनना अच्छा है। इसके विपरीत केवल दिखौआ वा जाति या देशकी काया पलटनेके लिए—उन्हें अपने आचरणोंसे कलंकित करनेके लिए—सुधारक शब्दकी अपनेपर छाप लगानेका प्रयत्न करना सचमुच उस पवित्र शब्दकी मिट्टी पलीत करना है। सुधारक सदासे होते चले आये हैं। इतिहासमें ऐसे पवित्र पुरुषोंके बहुत उदाहरण मिल सकेंगे। पर आजकलके जो सुधारक हैं वे सुधारक हैं या सुधारकरूपमें जाति या देशकी पवित्र मर्यादाको मिट्टीमें मिलानेवाले हैं? यह विषय कुछ विचारणीय है। मेरा जहांतक खयाल है आज कलके सुधारकोंमें प्रति सहस्त्र संभवतः ही एक या दो ऐसे सुधारक निकलेंगे जो वास्तवमें पवित्र वासनासे समाज या देशका काम करनेवाले हों। जो नाम मात्रके सुधारक कहलाकर समय पाकर अपने सुधारकी आड़में बड़े बड़े शिकार कर डालते हैं—अपने बुरे चरित्रसे भारीसे भारी अनर्थ कर डालते हैं—क्या वे सुधारक हैं? मनुष्य हैं? हर्गिज नहीं। पाठक, हम आपको आज एक ऐसी ही घटनाका हाल सुनाते हैं जिससे आप जान सकेंगे कि सुधारक बनकर लोग कैसा कैसा अनर्थ करनेपर उतारू हो जाते हैं।

प्रसिद्ध सेवासदनके सेक्रेटरी मि० दयाराम गीडूमल एक अच्छे सुधारक गिने जाते हैं। आपने तथा आपके स्वर्गीय मित्र मि० बहरामजी मलाबारीने उक्त संस्था स्थापित की थी। जबसे यह संस्था स्थापित हुई है तबसे इसकी उन्नति होती जाती है। देशमें भी इसकी अच्छी प्रतिष्ठा है। अभी सुननेमें आया था कि मि० दयाराम सन्यासी होनेवाले हैं। कारण आपकी उमर लगभग

६० वर्ष पार पहुंच चुकी है । सारा जनसमाज आपके इस विचारको कार्यके रूपमें देखनेको उत्काण्ठित था । पर अब सुननेमें आया है कि आप सन्यासी नहीं किन्तु फिर एक नवीन गृहस्थ होना चाहते हैं । वात यही हुई । मि. दयारामने मिस उर्मिला नृसिंहराव द्विवेटियाके साथ, जिसकी उमर २५ वर्षकी है, विवाह कर लिया । मिस द्विवेटिया भी कई वर्षोंसे सदनका काम वड़ी उदार बुद्धिसे कर रही थी । न जाने यह बुढापेमें मि० महाशयको क्या सूझी जो स्त्री और लड़कोंके रहते हुए भी एक कुमारीके सुखका वृक्ष भस्म कर दिया । पर वात यह है कि जिन मनुष्योंके हृदय गन्दे होते हैं, जिनके जीवनका उद्देश्य केवल अपने हृदयकी नीच वासनाओंके तृप्त करनेका होता है, वे कहांतक बच सकते हैं । शास्त्रकारोंका यह अनुभव क्या कभी मिथ्या हो सकता है—

अंगारसदृशी नारी नवनीतसमा नराः ।
तत्तत्सान्निध्यमात्रेण द्रवेत्पुंसां हि मानसम् ॥

कभी नहीं । मि. दयारामके इस नवीन सुधारकी चर्चा घरघर हो रही है । सचमुच उन्होंने इस घृणित कामको करके नवीन और पुराने विचारके लोगोंमें वड़ी खलबली मचादी है । सुधारक लोग उनके नामको रो रहे हैं । कौन जानता था कि मि० दयाराम सेवा-सदन सरीखी परोपकारी संस्थाकी आड़में कभी ऐसा भयानक शिकार कर डालेंगे जिससे सारे जन समाजको आश्चर्य चकित होना पड़ेगा ।

मि०दयाराम और मिस द्विवेटिया दोनों पवित्र हिन्दू कुलमें पैदा हुए हैं । पर बेचारोंके अभाग्यसे हिन्दू कुलमें पहली स्त्रीकी सन्तानके मौजूद

रहते दूसरे विवाहकी सन्तानको उत्तराधिकार मिलनेका कानून न होनेसे उन्हें यह विवाह सिक्ख धर्मके अनुसार करना पड़ा है। अपनी काम-वासनाके लिए दोनोंको हिंदूधर्म छोड़ा देना पड़ा है। काम! यह तेरा ही काम था, जो ६० वर्षके बूढ़ेसे, जिसके मुँहमें दातोंका ठिकाना न रहनेपरभी ऐसा भयंकर अनर्थ घड़ावा दिया, धर्म छुड़वा दिया और कुल मर्यादापर पानी फिरवा दिया।

क्यों पाठक समझे? कैसा अच्छा सुधारका तत्त्व है? मि० दयारामने कैसे आदर्श सुधारकका काम किया है? यदि सुधारक होनेका यही अन्तिम साध्य हो तब तो हम उसे दूरसे ही अंजलि जोड़ते हैं और न हमें ऐसे सुधारकी ही जरूरत है जिसका उद्देश्य केवल हृदयकी बुरी वासनाओंका पूर्ण करना हो। पाठक, अन्तर्दृष्टि द्वारा जिधर आप सूक्ष्मतासे देखेंगे उधर ही सुधारकतत्त्वमें बड़ी बड़ी लीलायें दीख पडेंगी। कुछ समयकी और प्रतिक्षा कीजिए। धीरे धीरे सब बातें आखोंके सामने आवेंगी। इस दारुण स्थितिको देखकर खेद होता है कि असलमें सुधारका मतलब तो क्या था और किस मार्गपर उसे धर घसीटा। सुधारकोंकी ऐसी ऐसी लीलायें ही लोगोंको सुधारक शब्दसे डराती हैं। नहीं तो भला किस अभागेको अपना सुधार—अपनी उन्नति—बुरी जान पड़ेगी। काल्पनिक सुधारकोंको अब भी अपनी आंखे खोलकर देश या जातिके सच्चे सुधारमें लगना चाहिए। नाम मात्र सुधारक कह लानेसे कुछ लाभ नहीं।

२—विवाहमें लट्ठमार और कई एक घायल।

जबसे इन्दौरके समर्थ सेठोंने जातिके अधःपतनकी,—नष्ट हो जानेकी—कुछ परवा न कर उसकी सुश्रृंखलाको तोड़ मरोड़ डाली है—

उसमें एक भयंकर पिशाचिनीको जगह देदी है—तबसे वहां जातीय या धार्मिक कोई भी काम निर्विघ्न समाप्त नहीं हो पाता। एक न एक झगड़ा आकर उपस्थित हो ही जाता है। इन जातिके सुपूतोंका प्रभाव न केवल इन्दौरमें ही पड़ा है, किन्तु प्रायः मालवे प्रान्तको इन्होंने अपनी मुट्ठीका खिलौना बना लिया है। वे जैसा उसे नाच नचाते हैं वैसा ही वह नाचता है। इन्होंने अपने ऐश्वर्यके मदसे मत्त होकर बेचारी गरीब जातिकी—अपनी माताकी—छातीपर इतने जोरसे—इतनी निर्दयतासे—लात मारी है कि उसमें उठने तककी शक्ति नहीं रहने दी है। उसके अंग प्रत्यंग सब छिन्न भिन्न कर दिये गये हैं। खेद है कि उसकी इस अवस्थापर भी इनके दिलमें जरा दया नहीं आती, इनका हृदय नहीं पसीजता। किन्तु और उलटा उसे ये अपने अकर्तव्यसे अधिक अधिक दुरूह बनाते जा रहे हैं। न जाने कब इन्हें सुबुद्धि सूझेगी और ये इस बातपर विचार करेंगे कि " बड़े बड़े चक्रवर्तियोंके अभिमान क्षणभरमें जब नष्ट होगये तब हमारी उनके सामने गिनती ही क्या? क्यों हम अपयशका टोकरा अपने सिरपर उठाकर जातिका अकल्याण करें? " पर बात यह है कि ऐसे विचार पवित्र हृदयमें उत्पन्न होते हैं और इनका हृदय कितना पवित्र है? इससे जैन समाज अजानकार नहीं है। तब कैसे यह आशा की जाय कि इनके द्वारा जातिका हित होगा? एक तो वे पुरुष रत्न जातिमें अवतार लेते हैं जिनका कर्त्तव्य जातिको उन्नतिकी चरम सीमापर पहुँचा देता है, जो जातिके उत्थानके लिए अपने प्राणोंकी भी कुछ परवा न कर उन्हें होम देते हैं और कठिनसे कठिन क्लेशोंको भी सह लेते हैं। पर करते हैं अपना कर्तव्य पूरा। और एक ऐसे होते हैं जो चाहे देश या

जाति भले ही धूलमें मिल जाय पर वे उसकी कुछ परवा नहीं करते। उन्हें तो अपने मतलबसे काम रहता है। हम नहीं जानते कि ऐसे लोगोंको क्या कहा जाय ? अपने अभिमानकी रक्षा करना सब चाहते हैं, सबको कुछ न कुछ स्वार्थ भी रहता है, पर ऐसा अभिमान, ऐसा स्वार्थ, उत्तम पुरुषोंमें नहीं मिलेगा जिससे जातिके सर्वनाशकी भी कुछ परवा न की जाय।

इन्दौरके समर्थ सेठोंमें यह बात है। वे अपने अभिमानके सामने न देशकी परवा करते हैं और न जातिकी। वहांकी जातिकी आज बड़ी दुर्दशा हो रही है और उसका कारण भी यही हमारा समर्थ सेठ मण्डल है। इस मण्डलकी महा शक्तिने जातिमें बड़ा घोर जातिविद्रोह उपस्थित किया है ? इसका विस्तृत हाल तो फिर कभी पाठकोंको सुनावेंगे। आज एक नवीन घटनाका उल्लेख करते हैं, जिसे कुछ ही दिन बीते हैं और वह प्रभाव भी इसी मण्डलका है।

" इन्दौरसे पांच मीलपर बीजलपुर नामका एक छोटासा गांव है। वहांसे इन्दौरकी छावनीमें एक बरात आई थी। लड़केका पिता तो था श्रीयुत सेठ बालचन्दजीकी पक्षका और लड़कीका पिता श्रीयुत सेठ हुक्मीचन्दजीकी पक्षका। सम्वाददाताने लिखा है कि लड़केका पिता अपनी बरातमें किसी जाति बाहिर मनुष्यको साथ लाया था। जब यह बात लड़कीके पिताको मालूम हुई तब उसने लड़केवालेको इसलिए रोका कि मेरे घरपर आप उसे न लाइए, जो जाति बाहिर है। पर इसपर लड़केवाला कब रुकनेका था। उसने लड़कीके पिताके कहनेपर कुछ खयाल न कर साफ कह दिया कि

हमारे साथ वह आवेगा। जहां हम हैं वहां वह भी रहेगा ही। इसपर लड़कीके पिताने बिगड़कर कहा कि यदि ऐसा है तो जाइए, केवल वर और नाईको भेज दीजिए हम अपनी पुत्रीका विवाह कर देंगे। आपके आनेकी कोई आवश्यकता नहीं। इसी बातको लेकर झगड़ेने विकरालता धारण की। दोनों पक्षवालोंकी कषायें उत्तेजित हुईं। परिणाम यह निकला कि समय पाकर दोनों पक्षवालोंमें—एक जातीय भाइयोंमें—खूब लट्ठमार चली। कई एक घायल हुए। वे अभी अस्पतालमें पड़े हैं। इधर तो यह घटना और उधर लड़कीको धारका एक युवक विवाह लेगया। इसपर मुकद्दमा बाजी हुई। मजिस्ट्रेटने अपने फैसलेमें कहा कि लड़की अभी ११ वर्षकी है। इसलिए उसके पिताको अधिकार है कि वह चाहे किसीको दे। लड़केवाला अपनासा मुहँ लेकर रह गया। ”

क्यों पाठक! देखा भाइयोंका पारस्परिक प्रेम? जाना अहिंसा धर्मके पालनेवालोंका वात्सल्य? वाह जैनियो! धन्य तुम्हारा कर्तव्य! जातिकी दशा क्या तुम्हींसे सुधरेगी? त्राहि भगवन्!

इस घटनामें भूल किसकी है? यह बात पाठक स्वयं जान सकेंगे। हमें इसके कहनेकी कुछ जरूरत नहीं। हां हम तो इतना ही कहेंगे कि इसके मूल उत्पत्तिका कारण इन्दौरमें होनेवाला जातिविद्रोह है। हमें विश्वास है कि यदि इन्दौरके समर्थ सेठ जातिमें भयानक विद्रोह पैदा नहीं करते—परस्परमें फूट नहीं डालते—तो न तो ये दो पक्ष होते और दो पक्षके न होनेसे कभी ऐसे झगड़े खड़े न होते। पर कषायें भी तो कुछ चीज हैं? वे कैसे इन्हें शान्त बैठने देतीं? जो हो, अब भी इन्हें सुबुद्धि सूझ जाय तो अच्छा हो। हे

परमात्मन् ! जातिके इन श्रीमानोंको सुबुद्धि प्रदान कीजिए जिससे ये निरभिमानी हों और इन्हें जातिपर दया आवे—उसकी पतित दशापर ये भी दो आंसू वहावें ।

साहित्य-सम्मति ।

ऐतिहासिक स्त्रियां—लेखक और प्रकाशक, कुमार देवेन्द्र-प्रसादजी आरा । मूल्य ॥) लेखकसे प्राप्त । यह ९० पृष्ठकी पुस्तक है । इसमें राजीमती, सीता, चेलना, मैनासुन्दरी, द्रौपदी, अंजनी, मनोरमा और रयनमंजूषा इन आठ प्राचीन महिलाओंका चरित संग्रह किया गया है । इसमें सन्देह नहीं कि यह जैन महिलाओंके लिए बिलकुल नवीन चीज है । पर अच्छा होता यदि लेखक महाशय इसे विस्तारके साथ लिखते । जितनी बातें उक्त महिलाओंके सम्बन्धमें लिखी गई हैं वे बिलकुल संक्षिप्त हैं और संक्षिप्त होनेसे ही बहुतसे स्थल, जो कि अच्छी शिक्षा देनेके थे, शून्य रह गये हैं । पुस्तककी संस्कृत बहुलभाषा हमारे नितान्त मूर्ख स्त्रीसमाजके लिए कठिन जान पड़ती है । जो कुछ भी हो पुस्तकसे होगा लाभ ही । पुस्तककी छपाई सफाई दर्शनीय है । इस नवीन उपहारके बदलेमें लेखकको धन्यवाद ।

जिनाचारविधि—लेखक आर. आर. बोवडे सम्पादक वन्दे जिनवरम् । प्रकाशक कृष्णाजी रामचन्द लाटकर, निपाणी (बेलगांव) कीमत १) रु. । प्रकाशकसे प्राप्त । पुस्तक मराठी भाषाकी है । त्रिवर्णिकाचार आदि ग्रन्थोंके आधारपर लिखी गई है । इसमें संक्षेपसे गृहस्थ धर्मका वर्णन किया गया है । छपाई साधारण है । ९ फार्म-

की पुस्तककी कीमत १) रु. बहुत खटकता है। वन्दे जिनवरम्के पाचवें वर्षके उपहारमें यह पुस्तक दी गई है।

मनुष्येर खाद्य किं ?—मनुष्यका आहार क्या ? नामक हिन्दी ट्रेक्टका बङ्गलामें अनुवाद कराकर बाबू दयाचन्दजी बी. ए. ने प्रकाशित किया है। इसमें यह बात बतलाई गई है कि मनुष्यका स्वाभाविक आहार मांस खाना नहीं है। पुस्तक उपयोगी है। बाबू साहबका प्रयत्न प्रशंसनीय है। विना मूल्य प्रकाशकसे मिल सकती है।

मनोरंजन—हिन्दी भाषाका मासिक पत्र। श्रीयुक्त पं. ईश्वरी प्रसादजी शर्म्माके द्वारा सम्पादित और प्रकाशित। मिलनेका पता—मैनेजर मनोरंजन आरा।

इसके अभीतक सात अंक निकले हैं। केवल एक होलीके अंकको छोड़कर और सब अंक अच्छे निकले हैं। इसमें और और विषयोंके सिवा मनोरंजन करनेवाले लेख अधिक रहते हैं। मौलवी साहबकी कहानी तो हँसीके मारे पेट फुला देती है। छटे और सातवें अंकमें किरणशशीकी समालोचना लेखककी नीयत अच्छी नहीं बताती। एक छोटीसी पुस्तकपर इस प्रकार टूट पड़ना उचित नहीं जान पड़ता। समालोचना ही करनी है तो काशीके तिलिस्मभाण्डारकी करनी चाहिए। जिससे पाठकोंके हृदय अच्छी और झुकें। किरणशशीमें तो केवल भाषाकी गल्ती है। पर उक्त भाण्डार तो पाठकोंके हृदय तकको सड़ा रहा है। ऐसे ऐसे तुच्छ लेखोंसे पत्र पवित्र रक्खा जाय तो बहुत अच्छा हो। सम्पादक महाशय चाहेंगे तो पत्र बहुत कुछ उन्नत हो सकेगा।

———

पत्रों और समाचारोंका सार।

उत्तीर्ण हुए—कुछ दिन हुए स्याद्वादमहाविद्यालयके कुछ विद्यार्थी और उसके कार्यकर्ताओंमें अनबन होगई थी। फल यह हुआ था कि सात विद्यार्थी विद्यालयसे अलग होगये थे। विद्यार्थियोंने यह दृढ़ निश्चयकर लिया था कि चाहे कुछ भी हो, भले ही तकलीफ उठानी पड़े, पर पढ़ेंगे तो काशीमें रहकर ही। उस समय उनके स्कालर्शिपके बन्द होजानेसे पढ़नेमें सन्देह था। परन्तु कुछ जातिके उदार पुरुषोंने उन्हें सहायता देकर उनके पढ़नेका प्रबन्ध कर दिया था। परन्तु विद्यालयके अदूरदर्शी कुछ कार्यकर्ताओंको यह प्रबन्ध भी बहुत खटका, उन्होंने बहुत प्रयत्न भी इसलिए किया कि वह सहायता बन्द होजाय। विद्यार्थियोंने इन सब कष्टोंको सहन करके भी अपना ध्येय पूर्ण किया। वे क्वींस कालेजकी परीक्षामें उत्तीर्ण हुए। उतीर्ण होनेवाले विद्यार्थियोंमें गजाधरलाल न्यायमध्यम, श्रीलाल और मुन्नालाल व्याकरणमध्यम प्रथमखण्ड और भीषमचन्द प्रथम परीक्षामें पास हुए। विद्यार्थियोंको इस परिश्रमके लिए साधुवाद। पन्नालाल वाकलीवाल।

जैनधर्मकी शिक्षा मंजूर नहीं—“खुर्जामें राय बहादुर सेठ मेवारामजीका अनाथालय है। उसमें जैनियोंके बच्चे बहुत कम हैं। प्रबन्ध कर्ता भी एक ईसाई है। खुर्जाके एक जैन महाशयने सेठ साहबके पास जाकर कहा कि अनाथालयमें जैनधर्मकी शिक्षाका कुछ प्रबन्ध नहीं है; यदि आप आज्ञा दें तो मैं प्रतिदिन एक या दो घण्टे ऑनरेरी तौरपर कुछ पढ़ा आया करूं। परन्तु सेठ साहबने

साफ इन्कार कर दिया कि यह हमें मंजूर नहीं । " अस्तु । जैसी सेठ साहबकी इच्छा । एक जैनी शोलापुर ।

जलमरा—एक देहाती लड़का यहां परचूनीकी दूकान करता था । कनस्तरमेंसे मिट्टीका तेल निकालते वक्त उसकी दश पांच बूंद दहलीपर गिर पड़ी । लड़कने उसपर आग लगा दी । तेल थोड़ा था इसलिए जल गया । परन्तु दहली नहीं जली । लड़केने यह समझकर कि मिट्टीके तेलसे कुछ नहीं जलता, अपने कपड़ोंपर बहुतसा तेल डाल लिया और अपने पिता और दो चार आदमियोंसे, जो वहां बैठे हुए थे, देखो मैं तुम्हें एक खेल बतलाता हूं, यह कहकर उसने अपने कपड़ोंमें दिया सलाई लगा दी । फिर क्या था देखते देखते वह भस्मसात् होगया । बहुत प्रयत्न करने पर भी वे लोग उसे बचा नहीं सके । गिरनारीलाल टेहरी ।

अनाथाश्रमकी दुर्दशा—जबसे अनाथाश्रम देहलीमें आया है तबसे वह दुर्दशापन्न ही होता जाता है । लाया तो इसलिए गया था कि यहां उसकी कुछ उन्नति होगी । पर वह तो यहां आकर उल्टा एक दूसरी आफतमें फँस गया है । उसमें होनेवाले अन्यायकी कथा लिखते हृदय कांप उठता है । उसके रक्षक ही भक्षक बन रहे हैं । न जाने जैनसमाजका क्या भावी है ? मैं सारे समाजसे विनीत होकर प्रार्थना करता हूं कि अनाथाश्रमके सुधारकी चिन्ता जल्दी की जाय नही तो थोड़े ही दिनोंमें वह नाम शेष हो जायगा । एक जैनी.

पल्लीवालमहासभा—का प्रथमाधिवेशन अलवरमें हुआ था । उसके मंत्री श्रीयुत रामलालजीने हमारे पास वहांके पास हुए प्रस्तावोंकी

छपी हुई एक कापी भेजी है। पत्रमें स्थान न रहनेसे हम उसे प्रकाशित तो नहीं कर सके, पर इसमें सन्देह नहीं कि प्रस्ताव बड़े उपयोगी हैं। उनमें इस बातका अच्छा प्रयत्न किया गया है कि जातिमें विवाह शादी आदि जितने रिवाज हैं वे बिलकुल थोड़े खर्चमें किये जायँ। इस उद्योगके लिए मंत्री महाशय धन्यवादके पात्र हैं। जैनसमाजकी सब जातियां यदि उक्त सभाका अनुकरण करें तो जातिको बहुत लाभ पहुंच सकता है।

विवाहसंस्कार—नांदगांव निवासी चन्दूलालजी कालाकी पुत्रीका विवाह औरंगाबादके चन्दूलालजी बड़जात्याके साथ जैन पद्धतिसे हुआ था। विवाहके उपलक्षमें १५१) मन्दिरमें, २७) पाठशालाके लिये और ५) खण्डेलमहासभाके लागके लड़के वालेकी ओरसे और ५) रु० लड़की वालेकी ओरसे सभाको प्रदान किये गये। इसके अतिरिक्त गुलाबचन्दजी भीकचन्दजी नांदगांवने ५) रु० हंसराजजी बंशीलालजी नांदगांवने १) रु. और हंसराजजी देवकरण काशलीवाल साकोरने ५) रु० सभाके लागके प्रदान किए। उक्त सज्जनोंको धन्यवाद। खुशालचन्द नांदगांव।

सहायता—श्रीयुत लालचन्दजी कालाने अपने बड़े भाई चन्दूलालजीके स्मरणार्थ ११) रु० जैनसिद्धान्तपाठशाला मोरेनाको और २१) रु० सत्यवादीके उपहारकी सहायतार्थ प्रदान किये हैं। इस उदारताके लिए आप धन्यवादके पात्र हैं। क्या ही अच्छा हो यदि हमारे जैनी भाई आपका अनुकरण कर ज्ञानप्रचारके लिए इस प्रकार की सहातासे समय समयपर कृतार्थ किया करें।

ना समझी—खामगांवके सेठ मोतीलालजी श्यामलालजीने मुझे इसलिए बुलावाया था कि उनके मुनीम मोतीलालजी श्यामलालकी पुत्रीका विवाह जैनपद्धतिसे होना चाहिए। मैं गया भी। पीछेसे सेठजीने मुझसे कहा कि आपको बुलाया तो था जैन पद्धतिसे विवाह करानेके लिए, पर खेद है कि हमारे घरकी स्त्रियां इस बातमें सम्मत. नहीं हैं। इसलिए हम लाचार हैं। हमारा उनपर कुछ अधिकार नहीं चल सकता। यह देख मुझे वापिस लौट आना पड़ा। मुझे अपने भाइयोंकी इस ना समझीपर हँसी आती है कि स्त्रियोंके आगे भी उन्हें अपनी हार माननी पडती है। वह भी फिर एक तुच्छ बातके लिए। इसीसे कहते हैं कि स्त्रियोंको सुधारना बड़ा आवश्यक है। जबतक वे पढ़ लिख न सकेंगीं—शिक्षित न होंगीं—तबतक उनकी यही हालत बनी रहेगी। जातिके नेताओंको स्त्रीशिक्षाके लिए विशेष प्रयत्न करना चाहिए। खुशालचन्द नांदगांव।

प्राप्तिस्वीकार—जैनसिद्धान्त पाठशाला मोरेनाके लिए माघ सुदीसे वैसाख वदी तक युक्तप्रान्तसे २९१।॥), खानदेशसे २११), मालवाप्रान्तसे १४३), महाराष्ट्र प्रान्तसे ६९-)॥ राजपूतानासे ६१) और बुन्देलखण्डसे २४।) कुल मिलाकर ८००-)॥ की आमदनी हुई। उदार दातारोंको अनेकं साधुवाद। और भी भाइयोंसे निवेदन है कि वे इस पाठशालाकी सहायता कर पुण्यके भागी होंवे। इस समय पाठशालामें १७ विद्यार्थी और ६ उदासीन श्रावक विद्याध्ययन करते हैं। विश्वंभरदास मंत्री मोरेना।

नवीन पुस्तकालय—झालरापाटनमें " श्रीशान्ति पुस्तकालय " की स्थापना हुई है। इसका उद्देश्य सर्व साधारणाको लाभ पहुंचाना रक्खा गया है।

जैनधर्मपर व्याख्यान—गत २९ मईको पूनाकी वसन्त-व्याख्यानमालामें श्रीयुत तात्या नेमिनाथ पांगलका मा० गोविंद आपटेके सभापतित्वमें जैनधर्मपर व्याख्यान हुआ था। व्याख्याता महाशयने, स्याद्वाद, जैनी नास्तिक नहीं हैं, अहिंसा, जैनी ईश्वरको सृष्टिकर्ता क्यों नहीं मानते, आदि विषयोंपर विवेचन किया था। जैनधर्मके जानकार विद्वानोंके सार्वजनिक व्याख्यान होने लगे तो सबको बहुत लाभ पहुंच सकता है।

भयंकर बाढ़—पालीताना (काठियावाड़) में एक छोटीसी नदी है गत ११ जूनको एका एक उसमें बड़ी भयंकर बाढ़ आ-गई। सुनते हैं कि उसमें दो हजारके लगभग निरपराधी मनुष्योंको आत्मबलि देना पड़ी है। जैन बोर्डिंग के १७ विद्यार्थी और श्राविकाश्रमकी बेचारी बहुतसी श्राविकायें मर गईं। एक तो जैनियोंका वैसे ही दिनपर दिन ह्रास होता जाता है उसपर यह वज्र गिरा। न जाने जैनियोंका क्या भविष्य है ? भगवान् इस गरीब जातिकी रक्षा करें।

———

म. खण्डेलवाल जैं. महासभाके पञ्चमवार्षिकाधिवेशनका

संक्षिप्त-विवरण ।

गोंदेगांव (नासिक) में वैसाख सुदी ११ को मन्दिरप्रतिष्ठोत्सव था। वहांके पञ्चोंने इस अवसरपर खण्डेलवालमहासभाका अधिवेशन करनेके लिए निमंत्रण दिया था। तदनुसार वैसाख सुदी ९—१०—११ को सभाकी तीन बैठकें हुईं। उसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है।

इस अधिवेशनके सभापति धूलिया निवासी श्रीयुत सेठ गुलाबचन्दजी निर्वाचित किए गये थे। आप तारीख १२ मईको गोंदेगांव आये। स्वागत अच्छा हुआ। वहांके बहुतसे सज्जन आपके लिवानेके लिए सन्मुख आये थे। बैण्डबाजेके साथ साथ आपको गांवमें लिवा ले गये।

अधिवेशनमें श्रीयुत पं. धंनालालजी काशलीवाल बम्बई, खूबचन्दजी शास्त्री, वासुदेव शास्त्री मोरेना, पं. हुक्मीचन्दजी औरंगाबाद, पं. हीरालालजी धरणगांव, उदयलाल काशलीवाल बम्बई, आदि विद्वन्मण्डली, और सेठ गुलाबचन्दजी धूलिया, सेठ श्यामलालजी मोहनलाल काशलीवाल चान्दवड, सेठ केवलचन्दजी खुशालचन्दजी नांदगांव, सेठ चांदूलालजी कवलाने आदि धनिक मण्डलीके उपस्थित होनेसे अच्छा आनन्द रहा ।

सभाकी पहली बैठक वैसाख सुदी ९ को हुई। उसमें पहले पं. खूबचन्दजीने मंगलाचरण किया। इसके बाद वालंटियरोंके मंगलके उपलक्षमें कुछ भजन हुए। फिर सेठ श्यामलालजी चांदवडके प्रस्ताव करने और वंशीलालजी नांदगांवके अनुमोदन करनेपर श्रीयुत सेठ गुलाबचन्दजीने सभापतिके आसनको अलंकृत किया।

पश्चात् आपका व्याख्यान हुआ। वह अन्यत्र मुद्रित है। व्याख्यानके विपयमें हम विशेप न लिखकर इतना ही कहना उपयोगी समझते हैं कि जैसी हमारी जातिकी हालत सोचनीय है उसके लिए वह बहुत उपयोगी हुआ है। हमारी जातिके सज्जन यदि उससे कुछ काम निकालनेकी कोशिश करेंगे—उन त्रुटियोंको जिनका कि उसमें उल्लेख किया गया है, दूर करेंगे—और जिन बातोंकी आवश्यकता बतलाई गई है उनके पूर्ण करनेका यत्न करेंगे तो इसमें सन्देह नहीं कि वे अपनी जातिको बहुत जल्दी उठा भी सकेंगे। हम अपनी जातिके अगुआ-ओंसे अनुरोध करते हैं कि वे जरूर ही उस पर ध्यान देंगे।

सभापतिके व्याख्यानके बाद श्रीयुक्त सं० मंत्री खुशालचन्दजी नांद-गांव निवासीने सभाके वार्षिक हिसाबकी रिपोर्ट सुनाई। फिर अन्तरंग समितिका संगठन होकर सभाकी पहली बैठकका कार्य समाप्त किया गया।

दूसरी और तीसरी बैठक।

बैसाख सुदी १० गुरुवार दिनको और रात्रिको सभाकी दूसरी और ती-सरी बैठक की गई। उनमें सर्व सम्मतिसे नीचे लिखे प्रस्ताव स्वीकृत हुए।

१ प्रस्ताव—राजधानी देहलीमें प्रवेशके वक्त किसी अत्या-चारीने श्रीमान् हिज हाईनेस लार्ड हार्डिंज महोदयपर बम फेंककर जो भीषणकाण्ड उपस्थित किया था उसपर यह सभा घृणा करती है और उस विपदसे सुरक्षित रहजानेके लिए खुशी जाहिर करती है। ऐसी भयानक दुर्घटनाके समय भी श्रीमती लेडी हार्डिंजने जो अपने धैर्यका परियच दिया है उसकी प्रसंसा करती है।

प्रस्तावक—सभापति गुलाबचन्दजी,

अनुमोदक—पं. धन्नालालजी काशलीवाल,

२ प्रस्ताव—इस वर्ष मैनेजिंग कमेटीका चुनाव किया जाकर उसके सभासदोंकी संख्या २१ से बढ़ाकर ६१ की जाय और १९ मेम्बरोंकी प्रत्यक्ष वा परोक्ष सम्मति मिलनेपर कोरम पूरा समझा जाय। *

प्रस्तावक, पं. धन्नालालजी काशलीवाल.
अनुमोदक, सेठ श्यामलालजी पाटनी नेरी.

इसके वाद सर्व सम्मतिसे निम्नलिखित कार्यकर्त्ता चुने गये।

सभापति—पं. धन्नालालजी काशलीवाल वम्बई,
महामंत्री—सेठ श्यामलाल मोहनलालजी चांदवड़,
स. मंत्री—सेठ चन्दूलालजी पहाड़े कवलाने,
कोषाध्यक्ष—सेठ गुलाबचन्दजी धूलिया,

३ प्रस्ताव—प्रत्येक ग्राम व शहरकी, जहां कि खण्डेलवाल रहते हैं, पञ्चायतीकी नियमावली एक सी होनी चाहिए और उसे छपवाकर सब जगहकी पञ्चायतियोंमें भेजी जाय और सभाकी ओरसे सूचना दी जाय कि सब पञ्चायतियां उसके माफिक अपनी अपनी पञ्चायतीका संगठनकर उसके अनुसार कार्य करें +

प्रस्तावक—पं० धन्नालालजी काशलीवाल,
अनुमोदक—श्यामलालजी काशलीवाल,
,, उदयलाल काशलीवाल,

४ प्रस्ताव—गताधिवेशनमें कन्याविक्रय, वालविवाह वृद्ध-विवाह आदि कुरीतियोंके सम्बन्धमें प्रस्ताव पास किये गये थे, परन्तु

---

* मेम्बरोंके नाम अन्यत्र मुद्रित है. + नियमावली अन्यत्र मुद्रित है।

उनकी अमली कारवाई कुछ नहीं हुई। इसलिए उनकी पुनः पुष्टी की जाकर उनके रोकनेका प्रयत्न किया जाय।

प्रस्तावक—पं० खूबचन्दजी,
अनुमोदक—खुशालचन्दजी नांदगांव.
" लालचन्दजी काला "

५ प्रस्ताव—सभाकी ओरसे एक शिक्षाप्रचारकफण्ड खोला जाय और उसके द्वारा वर्तमानमें ९ विद्यार्थियोंको ८) रु० मासिकके हिसाबसे स्कॉलर्शिप दिया जाय। जहांतक हो विद्यार्थी खण्डेलवाल हो, पर ऐसे विद्यार्थियोंके न मिलनेसे अन्य जैन विद्यार्थियोंको भी दिया जाय ※

प्रस्तावक—उदयलाल काशलीवाल,
अनुमोदक—से० श्यामलालजी काशलीवाल,

६ प्रस्ताव—फिजूल खर्ची रोकनेके लिए, विवाह, नुकता आदिमें जो ब्राह्मणोंको भोजन कराकर दक्षिणा दी जाती है, चूंकि वह कुदान है, इसलिए बन्दकी जाय और वैश्यानृत्य आतिशबाजी आदि हानिकारक रिवाज बन्द किये जायँ। सभा उन लोगोंको धन्यवाद देती है जिन्होंने इन कुरीतियोंको अपने यहांसे दूर कर दी है और उन लोगोंके लिए, जिन्होंने कि अभीतक ये कुरीतियां बन्द नहीं की है, हिदायत करती है कि वे भी जल्दी बन्द करें।

प्रस्तावक—से० हीरालालजी गंगवाल
अनुमोदक—पं० धन्नालालजी काशलीवाल।

※ इस फण्डमें सहायता देनेवालोंके नाम अन्यत्र मुद्रित है।

७ प्रस्ताव—गत अधिवेशनमें संस्कारके सम्बन्धका जो प्रस्ताव नं. ७ पास किया गया था उसकी पुनः पुष्टी की जाय।

सभा श्रीयुत मोतीलालजी दगड़ा गोंदेगांव निवासीको धन्यवाद देती है कि उन्होंने जैनविवाह पद्धतिके अनुसार अपना विवाह करानेके लिए अनेक तरहकी तकलीफें उठाकर सभाके उक्त प्रस्तावका खूब दृढ़ रीतिसे पालन किया है।

प्रस्तावक—पं. खूबचन्दजी मुम्बई
अनुमोदक—वासुदेव शास्त्री मोरेना

८ प्रस्ताव—निम्न लिखित सज्जनोंको धन्यवाद दिया जाय।

१—प्रतिष्ठाकारक सकल पञ्चोंको, जिन्होंने आमंत्रण देकर बड़े उत्साहके साथ सभाका अधिवेशन कराया।

२—सभाके उन कार्याध्यक्षोंको, जिन्होंने पांच वर्षतक सभाका कार्य बड़े उत्साहके साथ करके उसे लाभ पहुंचाया।

३—इस अधिवेशनके सभापति साहबको, जिन्होंने सभापति होना स्वीकारकर सभाका काम निर्विघ्न समाप्त किया।

४—श्रीयुक्त पं. पन्नालालजी काशलीवालको, जो हर वक्त सभाके अधिवेशनमें उपस्थित होकर इस प्रान्तको ज्ञानका अपूर्व लाभ कराते हैं और सभाका कार्य बड़ी दिलगिरीके साथ करते रहते हैं।

५—सभासदोंको जो अपने कार्यकी कुछ परवा न कर सभाके अधिवेशनोंमें सम्मिलित होते हैं और सभाको हर तरहसे सहायता देते हैं।

६—पं. खूबचन्दजी, पं. वासुदेवजी, पं. हीरालालजी, पं. हुक्मीचन्दजी, उदयलाल काशलीवाल आदि विद्वानोंको, जिन्होंने यहां आकर अधिवेशनकी शोभा बढ़ाई।

७—वालंटियरोंको, जिन्होंने सभाके अधिवेशन होने आदिका प्रवन्ध किया।

प्रस्तावक—खुशालचन्दजी नांदगांव,

इस प्रकार सभाकी तीनों बैठकोंका कार्य बड़े आनन्दके साथ समाप्त होगया। प्रस्ताव तो इस वर्ष भी पास होगये हैं, पर अब सभा उन्हें कुछ उपयोगमें लावे तब कहीं वे लाभदायक हो सकेंगे। आशा है कि कार्यकर्ता महाशय अपने कर्त्तव्यका पालन करनेमें किसी तरहकी त्रुटि न करेंगे।

परिशिष्ट।

प्रस्ताव नं. १ का परिशिष्ट—

मैनेजिंग कमेटीके सभासद।

१	श्रीयुत	सेठ	हीरालालजी गुलाबचन्दजी	धूलिया.
२	,,	,,	श्यामलालजी मोहनलालजी	चांदवड़.
३	,,	,,	दगडूरामजी महादूरामजी	मांडवड़.
४	,,	,,	साहेबरामजी रतनचन्दजी	कांबी.
५	,,	,,	गुलाबचन्दजी पहाड़े	टाकली.
६	,,	,,	मोहनलालजी मन्नुलालजी	बालोद.
७	,,	,,	छगनीरामजी बंशीलालजी	वीरगांव.
८	,,	,,	दगडूरामजी साहेबरामजी	वाघलगांव.
९	,,	,,	मगनीरामजी लखमीचन्दजी	सिरजगांव.
१०	,,	,,	भाऊलालजी वाकलीवाल	राक्षसभुवन.
११	,,	,,	विसनदासजी काशलीवाल	आडुल.
१२	,,	,,	लच्छीरामजी काशलीवाल	औरंगाबाद.
१३	,,	,,	गणुलालजी झांझरी	जालनापुर
१४	,,	,,	कन्हैयालालजी पहाड़े	कन्नड़.

१५	,,	,,	छगनीरामजी पांडे	हातनूर.
१६	,,	,,	गोविन्दरामजी लुहाड्या	देवपुल.
१७	,,	,,	रतनचन्दजी मोतीलालजी	रहीमाबाद.
१८	,,	,,	धनराजजी ठोल्या	कसाबखेड़े.
१९	,,	,,	गुलाबचन्दजी पापड़ीवाल	देवगांव.
२०	,,	,,	ताराचन्दजी पाटनी	पारसोड़ा.
२१	,,	,,	तुसलालजी रामलालजी	शीवुर.
२२	,,	,,	राजारामजी पांडे	वोलठाण.
२३	,,	,,	धोंडीरामजी गंगवाल	वाकले.
२४	,,	,,	जुहारमलजी काशलीवाल	खंडाले.
२५	,,	,,	छगनीरामजी अजमेरा	कोपरगांव.
२६	,,	,,	चुंनीलालजी गंगवाल	कोकमठाण.
२७	,,	,,	चंदूलालजी पहाड़े	संवत्सर.
२८	,,	,,	लालचन्दजी गंगवाल	सारोला.
२९	,,	,,	छगनीरामजी वोहरा	देवलाणे.
३०	,,	,,	ताराचन्दजी सोनी	श्रीगोंदे.
३१	,,	,,	शान्तिदासजी काशलीवाल	पूना.
३२	,,	,,	पं. पन्नालालजी काशलीवाल	बम्बई.
३३	,,	,,	भीकचन्दजी ठोल्या	नासिक.
३४	,,	,,	पेमरामजी काशलीवाल	रुई.
३५	,,	,,	मोतीलालजी दगड़े	गोदेगांव.
३६	,,	,,	किरपारामजी दगड़े	देवगांव.
३७	,,	,,	भागचन्दजी पहाड़े	सोनज.
३८	,,	,,	गुलाबचन्दजी बड़जाते	टाकली.
३९	,,	,,	वंशीलालजी काशलीवाल	नांदगांव.
४०	,,	,,	छोटमलजी पाटनी	नायडोंगरी.
४१	,,	,,	तोतारामजी छाबड़ा	जलगांव.
४२	,,	,,	श्यामलालजी पूरनलालजी	नेरी.
४३	,,	,,	रतनलालजी गोधा	मुसावल.

४४	,,	,,	केसरीमलजी छावड़ा	मलकापुर.
४५	,,	,,	श्यामलालजी लुहाड़्या	बऱ्हानपुर.
४६	,,	,,	हीरालालजी श्यामलालजी	खामगांव.
४७	,,	,,	चन्द्भानजी काला	अमरावती.
४८	,,	,,	हीरालालजी गंगारामजी	नागपुर.
४९	,,	,,	मानमलजी झांझरी	पुलगांव.
५०	,,	,,	गंगारामजी पहाड्या	सड़े.
५१	,,	,,	उदयलाल काशलीवाल	बम्बई.
५२	,,	,,	मंनुलालजी पाटनी	कनकुरी.
५३	,,	,,	नानूरामजी पाटनी	टोके.
५४	,,	,,	मांगीलालजी काशलीवाल	कचनेर.
५५	,,	,,	चन्दूलालजी पहाड़े	कवलाणे.
५६	,,	,,	सदासुखजी काशलीवाल	नांदगांव.
५७	,,	,,	खुशालचन्दजी पहाड़े	नांदगांव.
५८	,,	,,	भाऊलालजी पाटनी	नांदगांव.
५९	,,	,,	लालचन्दजी काला	नांदगांव.
६०	,,	,,	चन्दनमलजी काशलीवाल	येवला.
६१	,,	,,	हरकचन्दजी गोधा	वारी.

प्रस्ताव नं. ३ का परिशिष्ट—

नियमावली—

खण्डेलवाल जैन पञ्चायती ।

(१) इस पञ्चायतीका नाम **खण्डेलवालश्रावकजैनपञ्चायती** होगा ।

(२) इसके उद्देश्य नीचे लिखे प्रकार होंगे—

(क) जातिसम्बन्धी समस्त व्यवस्थाका सुप्रबन्ध करना ।

(ख) जातिमें लौकिक और धार्मिक विद्याका प्रचार करना ।

(ग) जातिसम्बन्धी परस्परके झगड़ोंका मिटाना।

(घ) पञ्चायतीके नियम विरुद्ध कारवाई करनेवालेको योग्य दण्ड देना।

(ङ) गृहस्थ धर्मको लाञ्छित करनेवालोंको धर्मशास्त्रके अनुकूल विद्वान् पुरुषोंकी आज्ञानुसार दण्ड देना।

(३) इस पञ्चायतीके सभासद खण्डेलवालजातिके बाल, वृद्ध, युवा, स्त्री और पुरुष सभी बिना किसी फीसके समझे जावेंगे।

(४) इसके सभासदोंके अधिकार नीचे लिखे माफिक होंगे—

(क) इस पञ्चायतीकी ओरसे निश्चित किए हुए नियमोंपर चलना और विपक्षमें दिये हुए दण्डका सब प्रकारके सभासदोंको सहन करना।

(ख) पञ्चायतीकी बैठकोंमें शामिल होकर वही अपनी सम्मति दे सकेगा जो पुरुष होकर सोलह वर्षकी उमरसे ऊपर हो।

(ग) उक्त पञ्चायती द्वारा पुरुष वर्गमेंसे चुने हुए सभासद ही पञ्चायती सम्बंधी कार्रवाईकी तथा पञ्चायती और उसके हस्तगत सब फण्डोंकी व्यवस्था अपनी पञ्चायतीके बहुमतसे करेंगे।

(५) इस पञ्चायतीसे वहिष्कृत किये हुए सभासदको पञ्चयतीके किसी काममें किसी प्रकारकी सम्मति देनेका अधिकार न होगा।

(६) इस पञ्चायतीके दो विभाग होंगे। एक तो—**साधारणविभाग** और **प्रबन्धकविभाग**।

(क) **सर्वसाधारणविभाग** उसे कहना चाहिए जिसमें पुरुषवर्गके सभासदोंके बहुमतसे समस्त कार्य किये जावें।

(ख) **प्रबन्धकविभाग** वह होगा जिसमें साधारण पञ्चायतीमेंसे चुने हुए सभासदोंकी सम्मतिसे कार्य किया जाय।

(७) इस पञ्चायतीके निम्न लिखित कार्याध्यक्ष होंगे और वे दोनों विभागोंके कार्याध्यक्ष समझे जावेंगे।

सेठ—जो कि पञ्चायतीसे पास किए हुए सब कार्योंकी निगरानी रक्खे,

पञ्चायतीसे पास किये हुए सब प्रस्तावोंका प्रचार करे और जो अनुचित कार्रवाई होती हो उसे चौधरीकी सम्मतिसे बन्द करे।

चौधरी—जो कि सेठकी अज्ञानुसार निम्नलिखित काम करे और उनकी अनुपस्थितिमें उनका सब काम करे।

(क) पञ्चायती सम्बन्धी सूचना पत्र निकालना।

(ख) पञ्चायती द्वारा पास की हुई कुल कार्रवाईका एक वहीमें लिखना, वाहिरसे आई हुई चिट्ठियों और दरख्वास्तोंका जवाब देना और जाति तथा धर्मकी उन्नतिके नवीन नवीन उपायोंको सोचकर उन्हें पञ्चायतीमें उपस्थित करना।

कोषाध्यक्ष—जो कि पञ्चायती सम्बन्धी और हस्तगत संस्था सम्बन्धी आमदनी और खर्चका ठीक ठीक हिसाब रक्खे और प्रत्येक प्रकारके चन्देकी वसूली करे।

(८) पञ्चयतीके समस्त सभासदोंको, पञ्चायतीकी ओरसे सूचना मिल जानेपर पञ्चायतीमें अवश्य उपस्थित होना चाहिए। अगर कोई सभासद उपस्थित न हो सके तो भी एक तृतीयांश सभासदोंके उपस्थित होनेपर पञ्चायती सम्बन्धी कार्रवाई आरंभ करदी जाय और उनके द्वारा पास किये हुए प्रस्ताव सर्व पञ्चायतीके पास किये हुए ही समझे जायँ। अनुपस्थित सभासदोंको उसमें उजर करनेका कोई अधिकार न हो। उन एक तृतीयांश सभासदोंके किये हुए सब कार्य बहु सम्मतिसे पास हों और समान पक्ष होनेपर सेठकी अथवा उनकी अनुपस्थितिमें चौधरीकी दो रायें समझी जायँ।

(९) प्रबन्धकविभागके अधिकसे अधिक ग्यारा और कमसे कम सात सभासद नियत किये जायँ और पांचके उपस्थित होनेपर पञ्चायतीकी कार्रवाई आरंभ की जाय और बाकीके नियम ऊपर लिखे हुए नियमोंके अनुसार ही समझे जायँ।

(१०) इस पञ्चायतीके सभासदोंको, आम पञ्चायतीके विना किसीको बहिष्कृत करनेका अधिकार न होगा और बहिष्कृत किये हुएको पुनः सभासद बनानेका अधिकार भी आम पञ्चायतीके सिवा किसीको न होगा।

(११) इस पञ्चायतीके कार्याध्यक्षोंका चुनाव प्रतिदश वर्षमें हुआ करेगा। यदि पूर्वके कार्यकर्त्ताओंनें अपना काम अच्छी योग्यताके साथ किया हो तो पञ्चायतीको उचित है कि वह उन्हींको फिर भी कार्यकर्त्ता चुने। पञ्चायतीको यह भी अधिकार होगा कि यदि इस अवधिके बीचमें कोई कार्याध्यक्ष नियमाविरुद्ध वर्ताव करे तो वह उसे अलग करदे और उसकी जगह दूसरे सुयोग कार्यकर्त्ताको नियत करदे।

(१२) कहींकी स्थानिक पञ्चायतीमें किसी कारणसे यदि दो विभाग हो जायँ तो उनकें नेता अपने वैमनस्यके कारणोंको अपने प्रान्तकी पञ्चायतीके सामने उपस्थित करें और उस समय वह पञ्चायती जो कुछ फैसला करदे उसे दोनों विभागवाले बिना किसी उजरके स्वीकार करें।

(१३) जिस जगहकी पञ्चायती किसीको जाति बहिष्कृतका दण्ड दे, पीछा उसे शामिल करनेका भी अधिकार उसीको रहे। दूसरी पञ्चायतियां उसमें हस्त क्षेप न करें।

प्रस्ताव नं. ६ का परिशिष्ट—

शिक्षाप्रचारकफण्डके द्वारा वर्तमानमें ५ विद्यार्थियोंको ८) रु. मासिक सहायता देना निश्चित हुआ। इन चालिस रुपया महीनेकी आमदनीके लिए सोलह हिस्से किए गये उसमें निम्नलिखित महाशयोंने सहायता दी है।

२	हिस्सा	सेठ	हीरालालजी गुलाबचन्दजी	धूलिया.
१	,,	,,	श्यामलालजी काशलीवाल	चांदवड़.
१	,,	,,	भागचन्दजी पहाड्या	सोनज.
१	,,	,,	बंशीलालजी काशलीवाल	नांदगांव.
१	,,	,,	हंसराजजी दगड़े	गोदेगांव.
१	,,	,,	पूरनलालजी पाटनी	नेरी.
१	,,	,,	गंगारामजी पहाड्या	सड़े.
१	,,	,,	लखमीचन्दजी मगनीरामजी	सिरजगांव.

१	,,	,,	साहेबरामजी कचरदासजी	वाघलगांव.
१	,,	,,	छगनीरामजी बंशीलालजी गोधा	वीरगांव.
१	,,	,,	रामलालजी काशलीवाल	वाभुलगांव.
१	,,	,,	बंडूलालजी लुहाड़्या	परसोड़ा.
१	,,	,,	बंकटलालजी बिसनदासजी	श्रीगोंदे.
१	,,	,,	गोविन्दरामजी महादूरामजी	गोदेगांव.
१	,,	,,	टीकारामजी रतनचन्दजी	गोदेगांव.
१	,,	,,	मोहनलालजी काशलीवाल	खण्डाले.
१	,,	,,	चन्दनमलजी काशलीवाल	येवला.
१	,,	,,	तोतारामजी चुंनीलालजी	जलगांव.

वर्तमानमें श्रीगोंदेवाले स्वरूपचन्द विद्यार्थीकी अर्जी मंजूर की गई। उसे स्कालर्शिप देकर स्याद्वादमहाविद्यालयादिमें पढ़नेके लिए भेजना निश्चित हुआ।

जरूरत है ।

हमें श्रीपुष्पदन्त आचार्यके बनाये हुए प्राकृत यशोधरचरित्रकी संस्कृत टीकाकी बहुत जरूरत है । जिन सज्जनोंके पास हो वे उसके भेजनेकी कृपा करें तो बहुत अच्छा हो । यदि वे चाहेंगे तो हम कुछ रुपया उसकी डिपाजिटके लिए भी भेज सकेंगे । संस्कृत टीकाके न होनेपर प्राकृतकी संस्कृत छायासे भी काम निकल सकेगा । इसके अतिरिक्त एक संस्कृत भक्तामरचरित्रकी भी आवश्यकता है । आशा है पाठक हमारी प्रार्थनापर ध्यान देंगे ।

प्रार्थी—सम्पादक सत्यवादी
गिरगांव, बम्बई.

विद्यार्थियोंको सूचना ।

चार ऐसे विद्यार्थियोंकी आवश्यकता है जो स्याद्वादमहाविद्यालय अथवा जैनसिद्धान्तपाठशाला आदिमें पढ़नेके लिए जानेको तैयार हों । उन्हें खण्डेलवाल महासभाकी ओरसे स्कालरशिप दिया जायगा । अपनी योग्यताके साथ प्रार्थनापत्र नीचे पतेपर भेजना चाहिए । खण्डेलवालविद्यार्थीकी अर्जीपर विशेष ध्यान दिया जायगा ।

पन्नालाल कासलीवाल,
चन्दावाड़ी गिरगांव, बम्बई.

प्रार्थना ।

हम सब भाइयोंसे प्रार्थना करते हैं कि वे अपने २ गांवके पञ्चायती समाचारोंके भेजनेकी कृपा करें । हम उन्हें सहर्ष छापेंगे । हमारे इस पत्रका यह खास उद्देश्य है कि इसमें जाति सम्बन्धी हर प्रकारके झगड़े प्रकाशित किये जाकर और उनसे होनेवाली जातिकी हालत दिखलाकर उनके मिटानेका उपाय किया जाय । क्योंकि हमारी जातिके अधःपतनके कारण ये घरेलू झगड़े ही हैं । जबतक ये नष्ट न होंगे तबतक जातिकी उन्नति होना कष्ट साध्य ही नहीं किन्तु असंभव है । आशा है कि पाठक हमारी इस प्रार्थनापर ध्यान देंगे ।

जातिका एक तुच्छ सेवक—

उदयलाल काशलीवाल.

आवश्यक्ता ।

हमें महाराष्ट्रखण्डेलवालपञ्चमहासभाके लिये एक सुयोग्य उपदेशककी आवश्यक्ता है । जिसका धार्मिक और सामाजिक ज्ञान अच्छा होना चाहिए । वेतन उसकी योग्यताके अनुसार दिया जा सकेगा । नीचे पतेपर पत्र व्यवहार करना चाहिये ।

धन्नालाल काशलीवाल, चन्दावाड़ी—गिरगांव बम्बई ।

नांदगांवकी जैनपाठशालाके लिए एक सुचरित अध्यापककी आवश्यक्ता है । योग्यता विशारदपरीक्षातककी होनी चाहिए । साथमें धार्मिक और लौकिक ज्ञान भी साधारणतः अच्छा हो । पत्र इस पतेसे दीजिये ।

खुशालचन्द पहाड़्या, नांदगांव (नाशिक)